उग्रह

राम जैसवाल

राजस्थान साहित्य अकादमी (संमग)
उदयपुर

प्रकाशक : राजस्थान साहित्य अकादमी (संगम),
उदयपुर

संस्करण : १९७७

मूल्य : दस रुपये

मुद्रक : पवन आर्ट प्रेस, बीकानेर

प्रकाशकीय

नई पीढी के कथाकारो मे श्री राम जैसवाल की अपनी निजी पहचान है। उन्होने कुछ ही वर्षों मे साहित्य जगत म एक सम्मानित स्थान बना लिया है। श्री जैसवाल के कथा सग्रह 'असुरक्षित' को राजस्थान सा हत्य अकादमी पूर्वत पुरस्कृत कर चुकी है।

प्रस्तुत कहानी सग्रह में श्री राम जैसवाल की १२ कहानिया सकलित हैं जिनमे प्रत्येक का तेवर तीखा और सटीक है। ये कहानिया हिन्दी की प्रतिष्ठित पत्रिकाओ मे प्रकाशित हो चुकी हैं। हम विश्वास है कि इस सग्रह का हिन्दी जगत स्वागत होगा।

डा राजेन्द्र शर्मा
निदेशक

क्रम :

दाह

जीजी के आंखों के पपोटे सूजे हुये थे, और नीचे की कोरें एकदम सफेद। सारा चेहरा निष्प्रभ, आभाहीन, पीला, लगा जैसे वह आज बीत गई रात से नहीं, बरसों से बीमार हैं।

"बैठो भाई साब।"

"हां ऽऽ।" मैं बैठ गया।

लम्बा सा वार्ड, धुले सफेद चादरें बिछे पलंग, और उन पर पड़ी हुयी बीमार जिन्दगियां और हर बीमार के आसपास सबंधी, मित्र, हितैषी बैठे थे। पंखे गर्म हवा दे रहे थे। नर्सें बड़े अभ्यस्त हाथों से मरीजों को दवा पिला रही थीं — ट्रे लेकर देती, जिन्होंने इस वार्ड पर कुछ लिखती और भावहीन, संवेदना हीन चेहरे से आ—

वढ लेती। जीजी बड़ी फटी–फटी आखो से उसे देखती रही। हेमन्त उसके साथ ही आया था पर फल खरीदने के लिये नीचे मे रुक गया था, अभी अभी वह आया तो बोला, "स्याली, देखो तो क्या हाल कर लिया है।"

जीजी के चेहरे पर कही से सप्रयास मुस्कराहट उभरी पर बीच मे ही मर गयी शायद, बस चेहरा थोडा सहज हो आया, "फल क्यो ले आया रे हेमन, ये नही आये क्या ?"

"अच्छा बेटी ! चुपचाप रखले नखरे मत कर, देखा भाई साहब आपने, स्याली नखरे करती है।" वह मामूली हसता है।

हेमन करुणा का भाई है। भाई है पर स्याली, बेटी, बुढ़िया कहना धीरे धीरे ऐसे ही सबध खुल गये हैं उसके, बहन के या बडे होने के भ्रम, एक मित्र या मा के से ज्यादा, बहुत साफ, बहुत बेलाग, शायद कभी न टूटने वाले, कभी न टूटने वाले – हा जीजी यही मानती हैं। वे धर्मयुग, सारिका, अंग्रेजा के पन्ने टटोलती रहती हैं। हेमन ने मौसमी काटकर दबाई तो उसके रेशे तक बाहर फूट आये, मोटी और ठोस हथेलिया, वह अपने समय मे कालेज मे बॉक्सिग का चेम्पियन रहा है।

ग्लास मे से बीज निकाल कर जीजी के आगे रखा, वे फिर सहसा भर आई।

आधे दो टुकडो मे बटी बटी खोखली मौसमी मुझे जाने क्यों जीजी के चेहरे सी लगी मैं सह नही पाता हूं और चेहरा वहा से हटा लेता हूं। जीजी ग्लास को देखती रही उनकी आखें थोडी नम हुयी नीचे के दातो से ऊपर के ओठ को काटा फिर जैसे किसी अनचाहे 'एक्सप्रेशन' को रोकने के लिये ग्लास उठाकर एक साथ पी गई।

"हम बोलता उनको फोन करो फिर, यहा मरीज रहता है,

सुवा से चार घन्टा पड़े होई गया तुम घूमता फिरता यही.......... ।"

'सिस्टर'...... ।

'सिस्टर, क्या अभी वड़ा डाक्टर साहब आयेगा ।"

मैं बाहर सायास झाकता हूं, कोई शव रक्खा है, दो व्यक्ति बैठे है। कोई कह रहा है किसी घर की बहू है, आग लगा ली थी, आज रात को खतम हो गई। मैंने कलाई की घड़ी देखी पाच बजन मे छ मिनट बाकी थे, अभी तक घरवाले नही आये, चुप रहता हू। फिर कोई फुसफुसाता है कहते हैं सास ने आग लगा दी थी ब्याह मे ही दहेज को लेकर कई वार क्लेश हुयी थी......... । तभी तो अभी तक मिट्टी पड़ी है। दूसरा स्वर है ।

वह सिहर उठता है। जीवन कैसा हो गया है । बगल वाले पलग पर पड़ी स्त्री बार बार जाली लगे दरवाजे की ओर देखती है, शायद उससे मिलने कोई नही आया । कैसा तो लगता है सारा हॉस्पिटल जैसे सारी दुनिया बीमार है ।

"अच्छा। मौज कर पट्ठी, दवा खायेजा, फिकरी मत कर।" हेमन फिल्मफेयर पलटता रहता है।

बाहर, उस शव के पति और श्वसुर आ गये हैं, शव को पाटी पर कैसे और कौन रक्खे, जगह जगह से शरीर फूट गया है, अत सगे सगे कतरा रहे हैं। वह बिलकुल ठहर नही पाता ।

'ओफ! कैसी तड़कती धूप है यास, अपन तो कुछ लेकर चलेंगे, मामा राखे धरम है।'

वह मुस्करा कर अनुगत होता है ।

'ये जीजो को अचानक हुआ क्या ?'

'हुआ क्या, यार तुम्हें क्या बताऊं, खरच करना चाहते नही हजरत, अलग रहना चाहते नही, दिन मे छे वार चाय चाहिये और हप्ते मे दो वार तर मीट, अब उनसे हम कह सकते नही, जीजी से कई वार कहा, खैर करुणा समझदार है, निभ जाय पर श्रीमान जीजाजी को क्या कहे। बाजार मे सभी का उधार है और यार तकाजे अपने को नापसन्द–, "वेयरा! सुनो एक पेग "रम" और सुनो "स्नैक्स" भी। हेमन्त की आगे गुनावी हो आई है। सीने का बुश्शर्ट का बटन खुला है पसे की हवा से कालर उड़ता है तो पावडर की पर्त से ढका पत्थर सा सीना दिखता है।

'नही, मैं पूछ रहा था जीजी ... .?'

'जीजी को क्या यार, सी इज ए फुलिश, सेन्टीमेन्टल है अकेली रह नही पाती। सिगरेट।'

'नही, तुम पियो।' वह सिगरेट सुलगाता है।

देखो अपन तो इस दिमागी बिमारी से दस गज दूर रहते हैं। पाच सौ रुपयो मे कुछ होता है आजकल, वो तो पिछले चार साल मे शादी से पहले किसी तरह कुछ पैसे जोड लिये थे, सौ सवा सौ, उनका ब्याज आ जाता है तो कुछ गाड़ी खिच रही है। यार भाई साब। आप भी एक पेग रम लो न।'

'नो प्लीज, मैं बियर ही लूंगा,' अच्छा जीजी इन दो दिनो मे ही सफेद पड गई है।'

'मरेगी स्साली, वही ऐसे जिया जाता है, माना मैंने – उसने मुझे एक साल की उमर से पाला है, हर तरह की फ्रीडम दी है पर पास्ट को लेकर कब तक बैठा रहूं, नागेश पर बुरा असर पड़ता है, और फिर छोटा सा घर हम क्या ऐसे ही रह जायेंगे।" वह घूंट पीकर बैठ रहता है सिगरेट का कश लेकर दूर तक धुवे का राकेट छोड़ता है,

'देखा पहले इन्द्रा से कई बार 'इन्डायरेक्टली' कहलवाया, कैश सी भी हो गयी। नगेश का दूध रखा था पड़े जीजाजी आये चाय बनाकर पी गये। ना यार आय वा ट बोयर दिन नानसेन्स, आखिर मकान मालिक से ही कहा कि ऊपर का कमरा इनसे खाली करवालें, तुमसे क्या छिपाना, अपने से वह थोड़ा सा इम्प्रेस्ड है, अपन भी चुप रहे। साथ साथ घुमा नहीं मुफ्त का मर न ।'

"क्यों बट द टर "

"यार क्वाटर म भी ताद गय हैं जब मैंने ये कहा कि हम भी साथ चलेंगे। पहल आप बहा ठीक तो कराओ, पहली से आ जायेंगे।

"तुम गये तो नहीं ?"

"यार तुम भी .... , जाना क्या, वो रोना धोना तो सब ढोंग था, इन्द्रा खूब कर लेती है। अपन से नहीं होता।"

और जीजी सचमुच उस दिन सबरे स ही पीली पड़ रही थी उसी रस निचुड़ी मौसमी सी आधा सामान एक दिन पहले ही चला गया था आधा उस दिन गया। बीच में जीजाजी आय बाल साफ करवा दिया है, धुलवा दिया है। एक महाराजिन को कह दिया है सुबह शाम बर्तन माज जाया करेगी।

"क्यों, महाराजिन नहीं रखवायी खाना क्या मैं पकाया करूंगी।"

जीजाजी ने जीजी का चेहरा देखा, शायद व्यंग म कहीं हास्य का पुट हो पर वही तनाव और कडुवापन उनके चेहरे पर था। नहाकर तो आई थीं। खुले खुले लम्बे बाल और ताविया रंग आक्रोश का प्रतीक बन गये थे। साड़ी सुखाने डाली। उस दिन खाना नहीं खाया। इन्द्रा कैसी अभिनेत्री है, सावली सावनी एकदम,

पावडर पोंछे चेहरे को सजाती सवारती रही ग्रीर काजल लगाया, फिर दोपहर से ही रोती रही, नाक सुनक सुनक कर रोना प्रकट करती रही। तीसरे पहर रोते रोते जीजी ने इन्द्रा को समझाया, ग्ररे ! वह है तो शहर में ही ग्रौर एक हफ्ते बाद पहली है सभी साथ रहेंगे ही, एक हफ्ते का क्या काटना, ग्रौर मैं आती रहूंगी बीच बीच में।"

पर पहली निकल गई। दूसरी, तीसरी और [दस जून आ गई। जीजाजी ग्राज गरम हुये तो इन्द्रा भी गरम हो आई, बोली– कहां जगह है वहां दो कोठरी मे कौन कौन रह लेगा, सारे बराडे में सूरज दहकता है खाना वहा बनेगा ?

"भाई, बांस की टटिया लगवा देंगे।"

"गरमी को क्या कीजियेगा, आपको क्या आखें तो हम फाड़ेंगे ?"

"हेमन, कहां है ?"

"वो ही क्या कहेंगे, येई वो कहेंगे, बजार गये हैं।

"ग्रच्छा तो कल अपनी जीजी से ही कहना .... अच्छा चाय तो पिलाओ।"

"चीनी नहीं है।"

फिर अपने हाथ से पानी का एक ग्लास पीकर वह चले गये।

शाम साढे पांच बजे हेमन ग्राया। इन्द्रा पहले से ही तैयार हो रही थी। चुप कमरे बन्द किये दोनों जैसे कोई षडयन्त्र में शामिल हो रहे थे। तैयार होकर बाहर निकले, इन्द्रा के चेहरे पर पारीर काजल और ठंडी स्नो, एक तुष्टि और विजय स्पष्ट थी।

तब से आज तीन दिन हो गये पहले सुना जीजी बीमार पड गई है। फिर सुना काफी तबियत खराब है, और इन्द्रा तथा हेमन ने देखने जाने तक जीजी हास्पिटल पहुँच गई।

जीजी, सदा चुप रहने वाली जीजी, वाल आधे दिन आधे रात के प्रतीक, उमर से पहले ही पत्थर हो जाने वाला मन। वह चुप उसी के भाई हेमन को देखता रहा कठोर, तराशा हुआ गठीला छोटा कद। बोला अच्छा होरो चलो देखें आया है।

शाम को रात गये तक इन्द्रा खुसुर पुसुर करती रही और हेमन कोहनी पर चेहरा रखे चुप सुनता रहा और उसके मन मे रात गये तक वह जली हुयी लाश पडी रही जिसे छूने और उठाने के लिये उसके पति और ससुर किसी अन्य को टटोल रहे थ।
दूसरे दिन शाम को जीजी आ गई, हॉस्पिटल से लौट आई, वही हहराती बडी हवेली समय से होड करती, घटकर किरायेदारो के लिय छोटा छोटा हिस्सा बन गई है — अपर्याप्त। वही दाहिनी ओर नेम प्लेट लगी है, हेमन्त जौहरी, उनके भाई का नाम, पशुपति नाथ जौहरी, उनके पति का नाम। जीजी को न जाने कैसी वितृष्णा हुयी। आकर ऊपर चली गई, बरसो से इसी किराये की हवेली मे है। अपनी जिन्दगी की सबसे पहली याद से आज तक, ताई, चाची, बाबू सब यही थे। फिर ताऊजी का ट्रांसफर हो गया। चाची चाचा रह गये। फाम म अब उसे शरम सी लगने लगी थी तभी मा बीमार पड गई, हेमन एक बरस का था। मा फिर नही उठी तीन दिन बाद उस बुलाया। जलती आग सी चढती धूप और हुहु आती लू — मा ने पास बुलाया, बोली थी सुन मैं जो कह रही हू उसे समझ ले . देख . करुणा . . . . . . मैं जा रही हू अब हेमन्त को तू देखना ... मेरी ही तरह .... देखेगी न। समझ रही है मेरा कहना, और मा चली गयी।

छोटी चाची, बुआ, ताई फिर सब इकट्ठे हुए। फिर चौदहवें

दिन गन चले गये, रह गये बाबू चाचा चाची । घर का एक एक सामान कम होता गया, [illegible], फ्रेम्स, चांदी के गिलास कटाई के थाल और एक दिन चाचा और बाबू मे कहा सुनी हुयी चाचा चाची तब से आज तक नही आये । बाबू जाते तो बाहर से सांकल चढा जाते वह हेमन को खिलाती, सुलाती रहती, रोता तो बहलाती, सो जाने पर पढती जो उपन्यास, कहानी कविता अच्छी लगती ।

समय कैसे धीरे धीरे सरका बडे भारी भारी लोहे के पहियों सा । बाबू के साथ रोज शाम को उनके दोस्त आते, देर तक रात को ताश खेलते, फिर पीने और सो रहते, यही कोई हंसी की फुलझडी नही कोई उत्सव त्योहार नही, बन्द सागर बडे मकान मे ही वह बच्ची से जीजी बनती गई । अब कभी कभी सुनने मे आता कि बाबू उठने बैठने वालो से लडके तलाशने को कहते हैं । फिर सुना बाबू मे शायद बात तै हो रही है । लड़का ओवरसियर है हजार सौ रुपये महीने कमाता है साढे चार सौ वेतन है, और इतना ही उपर से कमा लेता है ।

उस दिन भी आंखे आज सी ही सूजी हुयी थी । बाबू ने पूछा था क्या बात है बेटा । मा के मरने के बाद पहली बार बाबू के स्वर मे स्नेह था और वह रो पडी थी फूट फूट कर । बडी मुश्किल से कह सकी थी कि कही पास ही क्यो नही देखते, ... हेमन को कौन देखेगा, ... और आप, ... आप ... . ।' बाबू को लगा था कि वो वाकई अकेले रह जायेंगे, हेमन और आवारा हो जायेगा । पिछले साल ही दसवे मे फेल हो चुका है । आस पास कई लडके देखे गये, नापसन्द हुये कुछ गुणो के कारण कुछ दहेज के कारण । बाद मे ये मिले, पशुपतिनाथ जौहरी, हाई स्कूल थर्ड, बेकार घूमते, शाम को देसी पीते पड रहते पर घर बडा था, सम्पन्न, बस लडके के बाप ही नही हैं तो क्या हुआ । जीजी ने सुना पर चुप रही । ससुराल पास तो है किसी से सुना, नौकरी का क्या है कर लेगा, आदमी तो कमा खा ही लेता है, बाबू जौहरी

तुम लडकी को यही दे दो कम से कम तुम्हारी खैर खबर रहेगी ।

शादी हुई एक विचित्र भय करुणा के मन को डसता जा रहा था, कुण्डली मार साप जैसे उसे घेरे था और अब उसकी पकड कसती जा रही थी। रात वे सोते सोते चौक पडती । कभी कभी गुस्सा हो तो मा दिखाई पडती। कभी लगता कही कमरे मे बन्द है और कोडो से मार रहा है, घना अधेरा है। फिर कोई ताले मे बन्द कर गया है उसके सिसकने की आवाज कोई नही सुनता, खुद ही सुनती है और जग जाती है।

शादी पर टायफायड हो गया, शादी हो गई । पशुपतिनाथ को बाबू ने अपने डिपार्टमेन्ट मे कह सुनकर लाइनमैन नियुक्त करवा दिया, तारो के साथ पोना पिलाना काम आया। कही इसी मकान मे जीजी क पहली प्रेगनेन्सी हुयी, फिर किसी प्रकार लडकी हुयी । वह भी पाच बरस रही, डिप्थीरिया हो गया था उसे, कभी न अच्छा पहन पाई न अच्छे खिलौने खेल पाई। बाबू रिटायर हो गये थे।

और पशुपतिनाथ को मिलते थे सत्तर रुपये । बडी हवेली तब खाली करनी पडी थी। उस छोटे से मकान मे बेबी रूधे गले से बेहोश पडी रही, बाबू सवेरे से ही पीकर पडे थे, हेमन शाम को लौटा था बाक्सिग की प्रेक्टिस करके, देखकर बोला जीजाजी कहा गये है, उन्हे लेकर भेजना बच्ची बीमार है ।

शाम को जब पशुपतिनाथ आये देर हो गई थी । डाक्टर के यहा जाना व्यर्थ रहा बेबी चली गई ।

तब से आज तक जीजी इस हेमन का मुह देखकर ही रहती आई थी, दुख मे सुख मे, इसके थोडे से बुखार होने पर खूब रोती थी, थोडे से ठीक उछलने खेलने पर खुश होती, धीरज बाधती । बी० ए० मे फेल हुआ तो बाबू छडी लिये ढूढते फिरे थे और जीजी ने तीन दिन छिपाये रखा। एक दिन जाने कहा से पिटकर आया चेहरा

नीला पड़ा हुआ था, कंधा उतरा हुआ तो बाबू ने जीजी को खूब सुनाई थी – क्या फायदा तेरे यहां रहने से लड़के को कुछ हो गया तो तुझे मार डालूंगा............ और... .... न जाने क्या क्या खूब बिगड़े थे ।

बाक्सिंग की प्रेक्टिस थी यह ।

एलिस ने आकर बताया था कि ये और शीला एक खाट पर सो रहे थे, डेडी ने देख लिया, दोनो को मारा भी तो बात अधिक नही बढ़ी थी इसलिए कि उस परिवार से बाबू के संबंध पुराने थे वर्ना....... .... ।

जीजी जैसे जड़ हो गई थी । और हेमन उस दिन से समझदार हो गया था । नौकरी कर ली, पैसे जोड़ने लगा । ऊंची सोसाइटी मे उठता बैठता, जन्म दिन पर फ्रेन्ड्स जुड़ते पार्टी देता, और अब जीजी के अन्दर और कोई भय एक बैठता जा रहा था । रात रात हेमन गायब रहता । या तो आता नहीं या आता तो पिए हुये, आके पड़ रहता । कई जगह शादी की बात की, पर बिना मां का लड़का बाप पियक्कड़, परिवार देख कर सब लौट जाते ।

और फिर हेमन का ब्याह भी पक्का हो गया, जीजी खुद इन्द्रा को देख आई थी । बात करके घूम फिरके । सावली सावली बी० ए० पास लड़की । चलो सावली है तो क्या हुआ सुशील लगती है । जब भी सोचती फुरसत पाने की सी बात सोचती, लगता पोर पोर टूटा हुआ है, कही कोई भी नस ऐसी नही है जो टूटी हुयी न हो, जिसमे दर्द न हो । सब बड़े साधकर सपनो सा सजाया, हेमन्त को सजा सवार कर दूल्हा बना कर भेजा । उस रात, रात भर लगा कही जैसे बिफरती तेज हवा के साथ मां भटक रही है क्या, अन्दर आगन मे रात भर ढोलक बजती रही, पर न जाने क्यो उनका दहलता रहा ।

बहू आ गई । साल बीता, बीतते, बीतते कई बार इन्द्रा को

मा आकर रह गई थी। गृहस्थी समाल गई थी, कई बार भाई आते सब से सशय की दृष्टि से देखते जैसे वह कोई चोरी करती है क्या।

इन्द्रा ने लडके को जन्म दिया, इस बीच जीजी बहुत व्यस्त रही सारे दिन कपडे धोती, सफाई करती सबको चाय बनाकर देती, काम करते करते फिल्मी गाने गुनगुनाती रहती शाम को सोने जाती तो एक थकान और तुष्टि का भाव उनके चेहरे पर पसीने के साथ झलकता रहता।

पशुपतिनाथ आजकल तन्त्र विद्या मे व्यस्त रहते। किसी के लडका न होता हो, बाझ हो, बच्चे डरते हो, किसी का पति न बुलाता हो ऐसी स्त्रियो की वे झाड फूक करते। गण्डे तावीज देते और उनके सहारे पीकर लौटते। जीजी ने कई बार समझाया था, क्लेश की थी पर सिर्फ इतनी चली थी कि पशुपतिनाथ उसे मा के पास रहने को बाध्य नही करते, न विवश करते थे, और वे सतुष्ट रहती। डेढ माह घर मेहमानो मे भरा रहा। फिर इन्द्रा साथ चली गई। लौट कर आने पर एक दिन फिर ऐसी घटना घट गई जैसे अचानक टाले हुये साप को डसना याद आ जाय।

जीजी शाम को घूमने गई थी। लौट कर देखा खाना ही नही बना है। हेमन और इन्द्रा घर पर नही है। बरतनो को देखकर लगा खाना बना तो है पर,... .... उसके अन्दर फिर कुछ उघरने दुखने जैसा हुआ पर फिर वे किसी फिल्मी गाने की लाइन गुनगुनाती रही थी, खाना बना लिया। दूसरे दिन सबेरे फिर वही घटना दोहर गई। रात पशुपतिनाथ के देर से लौटने के कारण जीजी को सोने मे देर हुई, साढे सात बजे सोकर उठी, देखा, सब लोग चाय पीकर फुरसत से बैठे हैं। खुद चाय बनाने गई तो पाया चीनी ही नही है। दोपहर को भी यही हुआ। कहो कोई तेल डाल डाल कर जला रहा है उन्हें, और, कौन देखेगा।

शाम को खाना नही खाया । पशुपतिनाथ फिर देर से लौटे। रात भर उस दिन नींद नही आई। सुबह भी चाय के प्याले नीचे खनकते रहे, फिर धोकर रख दिये गये। खाने के वर्तन स्टोव पर चढे, धोकर रख दिये गये, जीजी नही आई नीचे।

पशुपतिनाथ आज आफिस से छुट्टी पर थे। चीनी और चाय लाकर रखी। जीजी के चेहरे पर प्रयास करके जमाया हुआ शान्त भाव था, शाम को खाना बनाया। दूसरे दिन जल्दी उठकर आई चाय बनाई, चाय के लिये इन्द्रा को जगाया तो उसने कहा, हमें नही पीना। फिर हेमन से कहा, देर तक तो सुना ही नही उसने, गाढी नींद में था।

"हेमन। ऐ ऽ ऽ हेमन...... । उठ चाय नही पीना .. .... ।"

'........ भाई....... क्यो तग कर रही हो नींद आ रही है।" जीजी चाय वापस किचन में ले गई। हेमन की ओर देखकर इन्द्रा मुस्कराई, हेमन ने चादर ओढ लिया।

"ऐ, सुनो......... अच्छा ये बताओ कब तक ऐसे वन्दिश में रह सकते हैं, ... कुछ दिन और देखती हू .... ।"

सामने जीजी खडी थी, ठिठकी फिर ऊपर चली गई। दो बजे करीब पशुपतिनाथ ठेला लेकर आये, साथ में एक लडकी थी गोरी, गोरी भरा हुआ शरीर। एक आख भेंगी।

"इसका मालिक इसे बुलाता नही है, क्वार्टर दिखा दू इसे फिर पूजा कर दूगा।"

सामान रखा जाता रहा, जीजी खडी देखती रही। ठेला भर गया तो पशुपतिनाथ और वह लडकी उसके साथ चले गये, जीजी के मन में जमा ठडा धीरज अब पत्थर हो रहा था, किचिन में खाना बन रहा था। थाली लग कर ऊपर आ गई, जीजी ने कुछ कहा नही।

[उमह

स्टोव की सों सों के बीच कभी कभी इन्द्रा के हसने का स्वर उभरता फिर बैठ जाता। पान बजे ठेला दोबारा आया बाकी सामान रखा गया। दो एक मोहल्ले की औरतें आ गई थी।

" . ऐसी क्या जल्दी थी ? जवाब इन्द्रा देती कहती यहा जगह कम है वहा अच्छा क्वाटर मिल गया है ।"

ठेला चला गया तो पशुपतिनाथ ने सबसे हाथ मिलाया पूछा हेमन्त कहा है।

"अभी कही चले गये हैं।"

चबूतरे पर बाबू के लगाये गुलाबा के चारो ओर बास की बाड का घाग गल गया था और सब टुकड़े अलग अलग पड़े थे जीजी ने इन्हे कई बार बाधा था, चबूतरे पर पेड से छूटी सूखी दो पत्तिया भटकी सी हवा म सरक रही हैं ।

जीजी ने झुक कर नागेश को चूमा तो इन्द्रा रोने लगी, जीजी ने सहसा उसे देखा, फिर दृष्टि सूनी हो आई मन मे जाने क्या था जो पूरी तरह राख हो गया था। काठ सी वे खडी रही फिर चल पडी। दरवाजे पर एक नेम प्लेट लगी थी शेष, 'हेमन्त जौहरी' 1 दूसरी की जगह खाली थी – किवाड पर एक पट्टी का उजला सा निशान और चार कीलो के ठुकने के घाव बने थे।

आसमान मे आज बहुत धूल उडी थी और जाने किसी जली हुयी वस्तु के टुकडे ऊपर ऊपर मडरा रहे थे, सारी की सारी हवा जैसे राख ओढ़े घूम रही थी।

'धर्मयुग' ☐

अपने से परे

आज जाने कैसा लग रहा है, जाने क्या है, ऐसा जो इस तरह से उमड़ जाता है कि हर कहीं हर जगह उखड़ा, उखड़ा-सा महसूस करता हूँ, और इन क्षणों में साथ नहीं पाता स्वयं को। लगता है जाने, क्या जैसे पिछड़ता-सा बिसरता जा रहा है, जाने क्या था जो बीत गया है और मैं उसे बांध नहीं पा रहा हूं। दो घन्टे पहले से ही जैसे जीवन की सारी औपचारिकता गल कर बह गई हैं और मैंने जो टाके अपने व्यक्तित्व पर लगाये थे वे उखड़ गये हैं। अभी थोड़ी देर पहले मिस्टर सचेती को फोन किया था। साथ फिल्म जाने को कहा था, पर अब जाने क्यों लगा है कि कोई फिल्म अच्छी नहीं है, वही नकली नाच-गाना, विवश खिलौनों का नचाया जाना। अपने केबिन से उठ गया हूं। बाहर अपनी टेबल्स पर बैठे

क्लर्क्स और सतर्क और, और व्यस्त हो गये है । बाहर पीआॅन ने गेट खोल दिया है, अब सडक है। सडक इस तिराहे से बाईं ओर मेन मार्केट को चली गई है, दाहिने हाथ वाली किसी शहर के नाम पर है, शायद वही जाती होगी । एक हिस्सा सीधी सामने आ रही है, रिक्शा रुकवा लिया है ।

"चलो।"

रिक्शा चल दिया है।

"सिविल लाइन्स !"

आफिस तक आती वह सकरी सडक अब चौडी सडक मे मिल गई है। रास्ते के दोनो ओर के पेडो पर की सडक पर गिरती उलझी परछाइया फिर मौसम का नाम बोल रही है । पेड नगे हो गये है उन्हे देख लेता हू।

"रोको रिक्शा !" रिक्शे वाले को पैसे देकर सडक के किनारे सूखे पत्तो पर चलना अजीब सा लग आया है, शायद ठीक सा लग रहा है। औपचारिक से फासले परखने हुए चुप्पी साधे बगले उनमे कही-कही गुलमोहर मैजन्टा फूले हैं, धूप उजला रही है और दोपहरी का सा आभास देने लगी है – किससे पूछू कि डा० वरुणा अग्रवाल कहां रहती है । क्यो उनके पास जा रहा हू । वैसे उन्होंने बुलाया तो कई बार है शालीन हैं और बुलाने मे आग्रह है – मन भी कैसा पागल होता है । अपने पर मुस्करा आता हू । सिगरेट निकालकर सुलगाता हू तो नम्बर याद आते हैं – गली न० सात बी – डू ५४६, भाग विभाग सब जगह जिन्दगी बटी छटी है । ऊपर आसमान बडा उजला हो रहा है और धूप ने सारी सडक पर सूनापन रमा दिया है। आस पास किससे पूछू 'सिविल लाइन्स', स्तरीय परिवारो की चुप्पी बगले की किवाडो के बन्द दरवाजो पर खडी है । आगे दो तीन बगले छोड कर, आने वाले पर – छत पर दो लडकिया और दूसरे बगले पर खडे

दो लडके रिंग खेल रहे हैं। मुझे जाने क्यों अच्छा लगता है, थोडी देर खडा होकर देखता हू। दो साइकिल सवार पास से गुजर गये हैं। मुझे फिर अपनी उदासी याद हो आई है। किससे पूछू करणा का घर। गली न० ७ पत्थर लगा है। तो ठीक ही आ गया हूं। बी -१, बी -२ भी यही आसपास होगा – गली और गलिया - ठीक नदर पर खडा हू। अच्छा बगला है मेजेन्टा के ढेर से फूल बीच की सीमेन्टेड रो' पर बिखरे पडे है। बगला सूना है, बाहर के बराडे मे एक ग्रीक मेलन्यूड रखा है। छोटी सी आकर्षक मूर्ति। दो बार बैल दबाता हू और खडा हो जाता हू।

"अरे हितेन्द्र बाबू।"

"हा।"

"ओहो आइये, अच्छा हुआ आप आ गये। आज मैं भी हास्पिटल नही गई, सोचा आराम कर लू।"

"सो मैं आ गया...........?"

"तो अच्छा नही किया क्या – कहा आते है आप! कितने वायदे करते है!"

"अच्छा बैठिये!"

हल्की गुलाबी और हल्की नीली दीवारें, सोफ्ट कलर के कपडे से कवर्ड सोफा।

"क्या देख रहे हैं!"

सामने दीवार पर 'आरा' का चित्र लगा है, न्यूड, लिखा है, "डिफीट"।

'कभी-कभी मन बहुत घबराता है,

'जाने क्या है जो हर सांस के साथ छूटा जाता है।'

वाह! हितेन्द्र बाबू, आप गये सो अच्छा किया, पर अब बैठेंगे तो आज सुनूंगी आपसे, कब कब आने को कहा। अच्छा ये कहिये, ठंडा लेंगे या ....?"

'उदासी अब न छूटेगी कभी क्या —

'जिन्दगी तो बिछड़ती जा रही है।'

'वाह, अच्छा बियर ले आऊं, अब तो मौसम अच्छा है।'

फ्रीज खोलने और बन्द करने की आवाज से मैं जान जाता हूं कि वे बियर ला रही है। एक बार कह रही थी पीना नहीं चाहिये, पर बियर तो साफ्ट ड्रिंक है, लेडीज ड्रिंक, कोई भी ले सकता है।

पास की मेज पर स्टीलफ्रेम मे मिस्टर अग्रवाल का शादी का फोटो रखा है। मिस्टर अग्रवाल इंजीनियर हैं, अक्सर बाहर ही रहते हैं। एलबम रखी है, उठा लेता हूं। पहला फोटो पहला पृष्ठ अमृता का लगा है। अमृता अब नहीं है, करुणा की तीन वर्ष की बेबी, रही नहीं बड़ी बड़ी पलकें खोले जैसे मुझे पूरी आंखों से देख रही है। मैं एलबम रख देता हूं।

बियर ले आई है वे और मेज पर ग्लास रखे दिये है —डालिये।"

ग्लास झाग से भर गये है।

अच्छा, ये सिप करते जाइये और ये काजू लीजिये। सफेद झक काजू नमक से भूने से, 'यह एलबम दिखाऊं आपको।"

'ये मि० अग्रवाल शादी से पहले, ये मैं और वे ताजमहल पर, ये बाद मे दिखाऊंगी, मेरी — हमारी शादी की ये वो पहली चिट्ठी जो उन्होंने लिखी थी.......... ये.......... ये.........., ग्लास का

अन्तिम घूंट पीकर मैंने रख दिया है – उन्होंने ग्लास फिर भर-दिया है, 'ये जानी है, 'पिजड़े में सफेद तोता आखें दिखा रहा है, शादी से पहले का उनका मित्र। मैं फिर सिप कर रहा हूं, उनकी बाईं ओर एक चित्र लगा है किसी का, बाहों मे सर छुपाये एक आदमी बैठा है और बहुत से चमगादड उसके ऊपर उड रहे हैं, एक उल्लू उसे घूर रहा है, उसके सर के पास बैठा है।

"अरे ! क्या देख रहे है ?"

मैं फोटो देखता हू – 'हा' थोड़ा मुस्कराता हूं, मैं फिर वही से उखड गया हूं। माथे पर पसीना झलक आया है।

'ये............, मैं फोटो रखकर उठ लेता हूं, अच्छा फिर आऊंगा।

अरे, मुझे खयाल ही नही रहा, अपने फोटो ही दिखाये जा रही – हूं – सारे अपने ही, आपसे कुछ सुना नहीं, अभी बैठिये न, ऐसी क्या जल्दी है ? और लाऊं बियर !

"नो, थैंक्स ।"

"कुछ सुनाया नही – कहेंगे नहीं।"

"वही काफी था, गुजर गया जो वक्त

दर्द कब कम हुआ है सासो मे।"

सफेद झक पलग बिछा है। दीवाल पर एक बडी बडी हेट्स का साफ-सुथरा कलेन्डर टगा है।

"एक ग्लास पानी ।

"पानी ?"

"हां।"

पानी पीकर बाहर आ गया हूं।

क्या काफी देर अन्दर बैठा मन बड़ा थक गया है। धूप पीली पड़ गयी है, पर सड़के और गलियां यों ही सुनसान है।

"फिर कब आइयेगा।"

"जल्दी ही आऊंगा।" एक औपचारिक मुस्कराहट सप्रयास मेरे ओठो पर आ गई है।

"कहते तो हैं आप। पर याद कहां रहता है आपको वायदा।"

मैं चुप उसे देखता हूं, इस बार मेरी आंखें उसकी आंखों के पास उतर आती हैं, उसकी सपनीली आंखें चुप हैं।

मैं चुपचाप गलियों से सड़क पर आ गया हूं। आफिस से दो घन्टे पहले उठ लिया। मिस्टर सचेती के साथ फिल्म भी न गया। कम से कम तीन घन्टे तो कट ही जाते। डा० करुणा के यहां चला आया। एक सिगरेट सुलगा लेता हूं, लगता है मैं बड़ा अव्यावहारिक हूं। जब तक फोटोज की संख्या कम होती तब तब तो धैर्य रखता, पर जाने क्या हो जाता है कि अपने पर से नियंत्रण उठ जाता है और कहीं से भी, किसी से भी स्वयं को जोड़ नहीं पाता।

अब किधर जाऊं। दाहिनी ओर म्यूनीसिपैलिटी के द्वारा बनवाये पार्क मे लोग उलटे-सीधे पसरे पड़े है। बीच मे लगी गाधी जी की मूर्ति पर एक कौवा कांव कांव कर रहा है, नीचे लॉन मे एक कोई सिन्धी पेयर चाट खा रहा है कई रिक्शे एक साथ गुजरे हैं। आखिरी रिक्शे को हाथ देकर रोक लेता हूं।

"स्टेशन।"

किसी भी गाडी के आने का समय नही है। इक्के दुक्के मुसाफिर बैठे है। मुझे स्टेशन पर आकर सुकुन मिलता है, शायद लगा करता है कि जो मुझे आज लग रहा है वह अनुभूति यहा के मुसाफिरो के चेहरो पर हमेशा पुती रहती है। अन्दर से आकर उनके थ्राठ, आखो पर, हाथो पर आकर व्यस्त होती रहती है। यहा चाय पीना भी इसीलिये अच्छा लगता है। भीड चाय पी रही है। एक दूसरे से सटे–टकराते, फिर भी कितने अलग विरक्त, बिल्कुल अजनबी। चाय लेकर पास पडी बैंच पर बैठ जाता हू। खम्भो पर बहुत से आने वाली नयी फिल्मो के पोस्टर लगे हैं। किसी–किसी फिल्म का नाम बडा आदर्शपूर्ण रखा है, मुझे पता नही क्यो घृणा हो आती है, उठकर घूमने लगता हू, अब साझ हो चली है, लोको शेड मे शटिंग करते एजिनो का धुआ आसमान मे सुनहरी होने लगा है, हल्की हल्की ठड मौसम मे घुल आई है। कलाई की घडी मे शाम का ६ बजा है। तारीख लगी है १४, वृहस्पत है आज, नही तो घर वापस लौट चलू, टोकेगी तो कि रविवार की सुबह – आज वृहस्पत को कैसे ? चलू – वही चलता हूँ .... रविवार को सुबह चार बजे घर पहुँचना और ठडे घ घेरे मे लिपट कर उसके साथ सो जाने की कल्पना थोडा सुख दे जाती है। ऐसे ही सही, कभी अनियमित भी होना चाहिए, एप्लीकेशन नही भेजू गा और आशा को लेकर खूब घूमू गा।

स्टेशन पर गजर हुए हैं और हारे थके से बैठे लोग घूमने लगे है। मैं जाकर टिकट ले लेता हूँ गाडी ठीक समय पर है।

बहुत भीड नही है। कोने पर शीशे के पास बैठ जाता हू, पौने सात बजे गाडी छूटेगी। बाहर प्लेटफार्म पर छोटे–छोटे वाक्यो का शोर एक दूसरे से टकरा रहा है – पान, बीडी ऽ ऽ , चाय रबडी ऽ ऽ।

मैंने फिर एक पैकेट सिगरेट ले ली है, 'सिगरेट सुलगा लू, आपको आपत्ति तो न होगी।"

"नहीं नहीं, आप पीजिये ।"

एक कोई व्यापारी परिवार है, व्हिसिल देकर गाडी सरक ली है। बहुत से उठते हाथ, भीगी निगाहें, ठगे से, बिछडे व्यथित से चेहरे स्टेशन पर छूट गये है। मुझे फिर उदास उदास सा लगा है, नौ बजे ये गाडी जयपुर पहुँच लेगी। पास मे बैठा वह परिवार और अन्य लोग व्यवस्थित हो गये है। मेरे पास का परिवार मध्यम वर्ग के लगते है ये लोग, पत्नी साधारण पढी लिखी लगती हैं, पति भी कोई व्यापारी जैसे है। वह अब अपने गहने उतार कर बक्स मे रख रही है, मैं पहले उसके पति को देखता हू, फिर उसे, इकहरा शरीर, झुकी झुकी पलकें, सावला रग, हाथ से कगन उतार कर बक्स की जेब म रख है तो एक पत्र निकल पडा है। उसके साथ म किसी का फोटो है।

'हा, देखू, ये ही है न तुम्हारे भ ई के मित्र ?"

उसने चुप-फोटो उन्हे दे दिया है, 'ये भी खूब हैं, तुम्हारे लिये लिखेंगे पत्र, सबका मुझसे होगा, वह चुप दूसरी ओर देख रही है। उसके चेहरे पर एक कैसा सौम्य आवरण है चुप्पी के साथ जमा हुआ, अनेक ही बातो का सिलसिला। जिधर वह देख रही है, शीशे में बहुत से बैठे लोगो की धुधली परछाइया गिर रही है, मुझे अपना चेहरा अजीब सा लग रहा है।

'वह खत देना इनका दूसरा वाला — वह चुपचाप बाक्स खोलकर पत्र दे देती है। ये पढते हैं और चुप चुप मुस्कराते हैं, ... 'यह ये भी खूब है, प्यार मुझे करते है, पत्र तुम्हे लिखा है।"

मैं वहीं से हिल गया हूँ और न चाहने पर भी कोई चीज गले और आखो मे भभक कर गीली हो आई है।

मैंने गौर से उसकी पत्नी को देखा है, सावली भारी पलकें, सीधी नाक, पतले ओठ। मैं फिर वहीं शीशे से देखने लगा हू और

शीशे में बैठे कितने लोगों की परछाइया और गाड़ी में चलते सरगम में से वह छोटी सी गलियों गलियारों वाला गाव उभर आया है, मेरा गाव।

मैंने ही उसे कब चाहा था, शंकर ने कहा था कि वह तुम्हें प्यार करती है, न मानो तो देख लो — पूछ लो पत्र देकर — कई दिन तब मैं उस सावली चुप लड़की की शक्ल देखता रहा था, पर बहुत कम उठने वाली भारी पलकें मैं पूरी खुली हुई तब भी नहीं देख पाया था जब पत्र रोज देने लगा था, प्यार हो गया था। हंसी सी आती है।

गाड़ी रुक गई। कोई छोटा स्टेशन है, सिग्नल देकर चल दी है। अच्छा ही हुआ, पर मुझे लगता है कोई बड़ी कीमती चीज टूटकर बिखर गई है, पारे जैसी, और मैं बटोर नहीं पा रहा हू। क्यों किया उसने ऐसा कि जब बाहर बाहर से पढ़कर लौटा था मैं दो वर्ष बाद तब अपना होना गलत साबित हुआ था। शंकर के बक्स में पत्र देखा, था मैंने कि वह प्यार मुझे नहीं करती थी और मुझे तो यों ही बेवकूफ बनाती थी। कई बार अक्षर पहचानता रहा था...... राइटिंग उसी की थी।

शीशे में धुंधली आकृतिया हिल रही है। मुझे लगता है जैसे मुझे कोई कभी न खतम होने वाला रोग लग गया है।

भैया कहने लगे थे, अच्छा हम तेरा ब्याह वहा करा भी दें पर कोई जिन्दगी बनेगी वही मेरी जैसी अस्त व्यस्त मन स्थिति में जियेगा। चाहोगे कुछ, पत्नी करेगी कुछ, अपढ़ लडकिया सभी एक सी होती है। मात्र औरत, गृहस्थी यो ही बिखरी रहा करेगी। तेरा ब्याह किसी 'ग्रेज्यूएट' से कराऊंगा। मेरे न सही, तेरे ही बच्चे घर-शालीन और सम्भ्रान्त बनें।

वह हो गया। आशा आ गई। सब व्यवस्थित है — घर पत्नी, बच्चे भी आ ही जायेंगे, शरीर मन, चेहरा सभी आकर्षक है उसका

सोनई रग, काली बरोनियां, नाजुक हाथ। उसे खिले गुलाब की सी गध नहा देती है।

"किसी अलग दिन नहीं आ सकते कभी, रही इतवार के इतवार यह भी कोई जिन्दगी है।"

और सच ही चार वर्ष होने आये। वह सण्डे सण्डे ही लौट आया है। तीज त्योहारो की बात और है, पर सब ठीक है। सजा-धजा छोटा सा घर, तिमंजिले पर से सारा शहर देखना आशा के साथ, कैसा अच्छा लगता है। "मैं किसी से प्यार करता, होऊ और से, तो ?"

"करो — मुझसे तो करते हो कि नहीं मेरा हिस्सा न खोये।" यह पहले दिन की बातें है। यही तो बडे भैया ने कहा था — देख, अब किसी लडकी से मैंने बातें की और तेरी भाभी को रोग लगा। अब तू ही कह, उस अपढ सावली लडकी से शादी करके तू भावुक मन लेकर सारी जिन्दगी रह पायगा ?

और आशा आ गई थी — अभी आते है तो सजी धजी गृहस्थी देखकर प्रसन्न होते है।

गाडी ने व्हिसिल दी है।

खिडकी मे से दिखती घूमती रोशनिया पिछडती जा रही है, जयपुर आ गया लगता है।

वह सावली लडकी अभी भी चुप शीशे मे गिरती परछाइयो मे खोई हुई है। उसका पति सो गया है, उसकी चुप्पी मुझे फिर चुभी है।

गाडी रुकती है। स्टेशन पर बसती ठड है। मन नहाया-सा हो आया है और दोपहर जो अकारण की उदासी थी, वह अब धुल-पुछ सी गई है। पहले सोचता हू स्कूटर, ले लू, जल्दी पहुच लूगा।

फिर सोचता हू, नही, रिक्शा ही लू गा, आराम से पहुँचूं, धीरे-धीरे किवाड़ खुलवाऊ गा और पराह भर बहूगा, आज ज्वर हो आया है, सा चला आया। मन एक विचित्र से सुख से भर रहा है। सड़के अ धेरे मे लेटी हैं और ट्यूबलाइट्स धु धली-सी हो रही हैं। हल्का कोहरा है, रिक्शे की परछाई आगे पीछे हाथी उसे जादुई सुख दे रही है।

'इधर दाहिने हाथ को , हां, इसी गली मे को तीसरे मकान पर इलेक्ट्रिक पोल से कुछ आगे को उस छोटे से टी-स्टाल के पास।'

रिक्शेवाले को पैसे देकर चुप-चुप सीढ़िया चढ़ता हूँ। अच्छा कहो कि तीसरी मजिल की ये सीढ़िया बिल्कुल बाहर से हैं अन्यथा कोई टोक देता और सारा प्लान बिखर जाता।

सीढ़िया चढ़कर दरवाजे के सामने हू। कितना अ धेरा जीने मे भरा है यह ऊपर की सीढ़ी पर खड़ा होकर महसूस कर पाता हूँ, दरवाजा धीरे से नॉक करता हूँ। ताला लगा हुआ है।

अ धेरा सीढ़ियों पर गाढा और गाढ़ा हो रहा है धीरे-धीरे उतरकर नीचे आ जाता हूँ, नीचे आकर धु धलाती सड़क पर जलती ट्यूबलाइट मे घडी देखता हू, ग्यारह बज चुका है। उस छोटी कैन्टीन पर एक दो लोग ही चाय पी रहे हैं। मन के भीतर उठते ज्वार को बिठा नही पा रहा हूँ। कोहरे मे डूबी सड़क अ धेरे मे सनी आ रही है, पीछे की बत्तिया धु धला रही है, दूर निकल आया क्या, दूसरा तिराहा आ गया है। कोई मेहमान आ गया है। लगता है, आशा हो सकता है उसके साथ फिल्म गई हो, कौन आया होगा ? अकेलेपन से छूटने को सिगरेट जला लेता हू।

'हां। अब कल मैं ही आऊगा, ठहरो। उसने अपना कोट उतार कर आशा के कधो पर डाल दिया है।' अरे! हां, आशा ही है, कौन है साथ मे, सास रोक कर देख रहा हूँ। कोट कधो पर डाल कर शायद उसके होठ छुये हैं अपने होठो से।

वह पास से गुजर रही है, पीछे अंधेरे मे खिसक गया हूँ सतुष्टि और आनन्द की एक ठडी पर्त उसके चहरे पर सजी हुई है, मैं विकतव्य विमूढ सा थोडी दूर उसके पीछे चलता हूँ फिर खडा रहता हूँ। लगता है खडा नही रह पाऊगा। अंधेरे म बहुत सा शोर और विकृत स्वर गूज रहे हैं। मुझे लगता है मैं भी जोर स चिल्लाऊ, पर क्योकि मैं शिक्षित हू, ऐसा करता नही हूँ। अब अब कहा जाऊ, अच्छा होता मैं इतवार को ही आया होता। कोई रिक्शा जा रह है।

रिक्शा।' रिक्शा रुक गया है। बैठ जाता हूँ।

किधर बाबूजी' बोल नही पाता हू, हाथ से सकेत करता हू, फिर कहता हू, 'स्टेशन'।



☐ अणिमा

रातभर का कोहरा

कमरे में आधे से ज्यादा परीक्षार्थी अभी कमरे में ही थे, और आधे से ज्यादा क्या सिर्फ दो एक ही कापी छोड़कर गये थे, ये या तो वे छात्र थे जो अभी तक साल भर पढ़े नहीं थे या हैं थे शायद जो बहुत कुशाग्र थे। मिसेज शर्मा ने फिर एक दृष्टि कमरे में बैठे छात्रों पर दौड़ाई सभी के सभी सर गड़ाये कापियों में व्यस्त थे। जाने क्यों मन में खीझ भर गई। सर का दर्द और बढ़ गया था। कालेज के पीछे रेल्वे लाइन पर साढ़े चार बजे की टाटल गुजर गई थी पर उसकी व्हिसिल और धड़ धड़ दिमाग में धस गई थी। सवेरे से ही मन बड़ा बोझिल था, घर की कलह, बीमारी और अर्थाभाव ने मिसेज शर्मा की सामर्थ्य नापली थी, बाहर आकर देखा तो कोई भी 'पीओन' नहीं था, थोड़ी देर बाहर खड़ी रही, शायद आये तो

पानी लेकर एक कप चाय और एनासिन या एस्प्रो मगवाले, एनासिन या एस्प्रो का नाम याद आते ही एक और चीज जुडी चली आती य दिन को नुकसान नहीं पहुँचाती। ऐसा लग रहा था जैसे सब कुछ गिर रहा है बैठा सा जा रहा है। चीनी भी तो नही मिलती सेक्रीन, मेडिकेटेड सेक्रीन पर्स मे हाथ डाला तो कुल गिनती के तीस नये पैसे थे जिन्ह चाय और एस्प्रो ही ही जायेगी और तभी हरी हरी ताजी सब्जियो की दुकान दिखाई पडी और दस दस के तीना सिक्के हाथ म पसीज गये – रास्त की दुकान मे दो आने सस्ती ही मिलेगी माहल्ले की सिन्धी की दुकान मे, ओफ ये लोग तो दूसरे बनिये हैं बस– अरे। सब छान खु.र फुसर एक दूसरे की ओर आखो मे लेन देन कर रहे थे। चेता होकर एक निगाह घुमाई तो हाथ पैर समेट।

जैसे जैसे वक्त बीता घ टे बजे तो लगा कि घ टे की झनझना-हट बडी देर तक कापनी रहती है। मन मे वेग से धौकती है, दर्द देर तक छटपटाता है भारी मन से कापी गिनी, ठीक से नोट की और आफिस मे आई, बडी भीड थी सभी अपनी जल्द बाजी म थे, मिसेज शर्मा को लगा कि उनमे इतनी सामथ्य नही है कि वे ये कह सकें कि प्लीज मुझे जरा जल्दी है। खडी रही।

दो तीन व्यक्ति ही रह गये तो कपूर एक्जामिनेशन सुपरिन्टेन्डेन्ट ने कहा, 'ओ ! अरे देखना, प्रो० गुप्ता ! मिसेज शर्मा काफी देर से खडी है जरा इनकी कापीज सभालना।" प्रो० गुप्ता को कापीज देकर शर्मा लौटी तो गुप्ता ने कहा जरा ठहरियेगा मैं गिन लू। कापीज गिन कर कहा 'थैंक्स', एक ठडी सास भरकर बाहर आई। साईकिल ठडी हो रही थी।

दिन घुमिल हो चुका था, थोडी ही देर मे रात घिर आयेगी। इनकी तबियत जान कैसी रही होगी दिन म, और डिम्पल सारे दिन रोया होगा, सब कुछ अभी ही होना था। सब्जी वाले की दुकान पर दो घडी ठिठकी .. लौकी ले लू – कल से ज्वर है उन्हे, कितना

कहा कि अधिक सोचा न करो रात बीत गया, समय रया कब है, यह सब भी बीतेगा – पर कैसा स्वभाव पाया है – कुछ खुशी होगी थोडी सी तो सारे मुहल्ले मे कहते फिरेंगे, बच्चो की तरह खुश होंगे और थोडा सा दुख होगा तो मन मे, चेहरे पर उदासी हटाये नहीं हटती लोकिया छुई तो लगा है तो तबजी पूछा क्या भाव है तो मालुम हुआ अभी तो नई चली है ७५ पैसे किलो। भाव पूछकर क्या करें ऐसे पढ़ताई जैसे तेज मिर्च काट ली हो। पालक ले लूं ६ पैसे का ढ ई सी ग्राम फायदा भी करेगा। एस्प्रो भी ले लूं गी – घर चल कर चाय बनाकर पहले डिम्पल का फिर इन्हे फिर मैं भी एस्प्रो ले लूं गी। अधे। आसमान के किसी सुराग से रिसता आ रहा था नीचे आकृतिया धु धली और काली होती जा रही थीं। मिसेज शर्मा आसमान का देखती फिर पेडल तेज चलाती। एस्प्रो लेने से दर्द तो थमेगा, पर निपिल ले लू, डिम्पल की बोतल बेकार पड़ी है फिर मेरे पास इतना दूध भी तो नही है और दूध न होने पर वह काटने लगता है। अब ऊपर का दूध पियेगा तो ही कुछ तन्दुरस्ती पकडेगा। साइकिल का पिछला पहिया कोई गढ्ढा या ईंट आते ही खट्ट बोलता। सामने से बहुत सी रोशनिया अ धेरे मे तैरती आती और पास से मोटर कार दुम बनकर गुजर जाती। दूर चर्च के गजर बज रहे थे। साइकिल की टूटी कण्डी मे से इक्का दुक्का पालक की पत्ती गिरती जाती और पानी लगातार चू रहा था। मार्च आ गई है पर माहौल हो जाने से हवा मे कितनी ठंड आ गई है। निकलती सरदी है और ये हैं कि मानते ही न थे आखिर थोडा सा ही तो फटा था, वह, रात मे कौन दबता है और फिर देखता है तो – अभी तक ज्वर भी – दो दिन से कैसा अपना है उतर ही नही रहा है, पडे पडे रोते रहते है। पहले अपनी सर्विस छूटने पर दुखी थे और अब दुखी होते है कि मुझसे सर्विस करवाकर मेरी कमाई खा रहे हैं। मुझे पूरी पे कालेज से न मिलेगी न सही कुछ तो चलेगा।

'मेहता डिस्पेन्सरी', डा० मेहता, टुडी मुडी ट्रेनिंग्स रा्डम

मे चमक रहा था दवा भी तो लनी है। डाक्टर साहब भले है पर आज तीसरा दिन है मेरा कोई हिसाब भी तो नही है। न हो तो मिसेज रैना से कुछ पैसे मागलू ये लोग तो काफी अरसे से कमा रहे है। तीस रुपये ले लू पे मिलन पर दे दिये जायेंगे। ये गुस्सा हो रहे होंगे पर दवा भी तो जरूरी है।

मिसज रैना ने स्वागत किया 'हैलो मिथलेश कैसे रास्ता भूल गई इस वरत।

'कालिज स लौ रही थी सोचा आप मे मिलती चलू।'

'हा ऽऽ तुम्हारी ता डयूटी होगी भई हम तो बच गये और आज हाली डे एनजॉय किया— और सुनो महाराजिन चाय रख देना, हा ये तो कहे चाय लेगी या कॉफी— और दखो कुछ नमकीन भी सेव लेना बहनजी आई ह।

'नो प्लीज थैक्स थैक्स प्लीज कुछ तकल्लुफ न करे मैं तो यो ही घूम पडी कुशल क्षेम पूछने देर तक बैठ नही पाऊगी यो ही काफी देर हो गई है इनकी तबियत भी ठीक न ी है।'

'अच्छा क्या हुआ — अच्छा हा सर्विस का क्या हुआ दोबारा रक्खा नही न सावरकर थोड जिद्दी ह और थाडी खुशामद ।'

य चित्र नया फ्रेम करवाया है क्या दीदी ?

शायद वही है जो इलस्ट्रेटड वीकली म थी। नेहरूजी का इससे अच्छा फोटो मैंन नही देखा।

हा, और फ्रेम ? इसस अच्छा फ्रेम भी न दखा होगा, बस फ्रेम अच्छा था तो ल आई और नेहरूजी का फोटो मैंने लगा तो दिया पर भई उनकी पालिसीज से मुझे कतई इत्तफाक नही, पर य बहुत मानते है और इनकी पसन्द का भी कुछ खयाल ता रखना ही पडता है।' और भई वडे नेता थे। अन्दर आई। 'महाराजिन को देखू वही

लेजी है ।'

वाहर आगन मे अधेरा वत्व के चारो ओर लिपटा था । एक अवानील अन्धेरे मे ऊपर से नीचे चक्कर काट रहा था । मिथलेश शर्मा कुर्सी पर वैठी थी, वैठी जा रही थी रुपये लेने की बात जैसे बार-बार हाथ से फिसल जाती है, किस तरह शुरु करे जिस हिम्मत और विश्वास से यहा आई थी वह अन्जुली के पानी की तरह चुकता जा रहा था । फर्श पर बिछे कालीन, मेज पर पडी विभिन्न पत्रिकायें, दीवार पर लगा मद्दिम रोशनी का उदयपुरी लैम्प उसके मन मे हीन भाव भर रहा था । लेन देन का व्यवहार वरावर वालो से ही होना चाहिये, वस ही इनमे सुपीरियरिटी काम्पलेक्स बहुत है । ये सोझ रहे होगे, डिम्पल रो रहा होगा । लग रहा था जैसे अन्धेरा बोझ बनकर क्यो पर घिरता आ रहा है ।

'वैसे मिथलेश बहन देखो ये दो चार रुपयो की कोई बात नही, आदमी वरत जरुरत मागले, अब देखो कहने की बात नही ये इतना फास्टली फ्रेम है वताऊ तुम्हे, पच्चीस रुपयो का एक है, मिसेज सीता कहने लगी एक मुझे भी आर्डर दिलवादो, मैं भली उनको साथ ले गई सोचा कम्पनी रहेगी और वहा पत्थर ही सर पड गया । हम कहते है उतने ही पैर न फैलाये जितनी चादर हो, पर वे तो उधार ले लेकर फैशन वधारती है । एक फ्रेम उनको-- फिर आखिर हां कहना ही पडा । कहने लगी अगली पे पर दे दूंगी-- ये देखो सारी के पल्लू से शीशा साफ किया— 'ये देखो ।' हॉफती जा रही थी । फ्रेम कैद शीशा और उसमे प्रतिबिम्बित कमरे मे भरा अन्धेरा और अन्धेरे मे डूबी मद्दिम रोशनी नजर आई-- 'अच्छा मैं चलूं, फ्रेम अच्छा है ।'

'और ये सोफा देखा आपने ? सोफा कम बैड, यो माडल तो बहुत निकलते है पर पूरे पाच सौ का है वैसे इसके साथ के साढे चार सौ के भी थे पर इसका गोल्डेन कलर मेरे मन भा गया । आपको वताऊ, मिसेज शर्मा को साढ़े पाच सौ का वताया पर हम तो उसके

पुराने ग्राहक हैं। जरा हाथ से छुओ- मैं जरा डेलाइट बल्ब आन करूं। बल्ब जला तो ड्राइन्ग रूम चमक उठा। हर चीज साफ नजर आई थी।

'देखा, आप कहे तो आपको भी दिलवाऊं।'

पूरे पचास का फायदा है।'

'वाकई सो बहुत है, पर फिर वक्त करूंगी, उनसे पूछलूं। अभी चलूंगी।'

'अरे ठहरिये तो महाराजिन चा ले आती है अभी।'

'ना, प्लीज फिर कभी ......।'

'ऐसी जल्दी में हैं, अच्छा फिर आइयेगा।'

साइकिल उठाई, बाहर शहर और बड़ा हो गया था। आज ये बहुत गुस्सा होंगे, मेहरी दिखाई पड़ी। काम छुड़ये तीन माह हुये तब से आज देखने को मिली है अभी है। पर, करती भी क्या। इसी से कुछ पैसे ले लूं। ये लोग छोटे भले ही है पर पैसे रखते हैं— वैसे भी भली है, बूढ़ी बड़ी हैं, बीस रुपये माग लूं।'

'राम-राम, बीबीजी कहा से आउती हो ?

'यहीं नहीं कॉलेज से लौटी हूं। उसके अन्दर कई कीड़े एक साथ रेंग रहे थे। इत्ती ठंड मे न घूमा करो ठंडक लगिजैहे।'

महरी का मुंह देखकर टटोला, इतने पैसे मांगे या न मांगे— चेहरे पर पड़ी लकीरों मे ममता और नेह था। कुछ देर चुप रही। मुंह मे कोई विचित्र सा स्वाद पिघला मेहरी चाची १२ रुपये है क्या, इनकी दवा ले जानी है पर्स घर भूल आई हूं। कलाई मे झूलते पर्स को मेहरी ने देखा। मियतोश को लगा एडी पर कुछ रेंग कर बढ़ रहा है।

''रुपिया बीबीजी ?........आजुकल तो नहीं हैं, हम तो तुमही से

मागन की थी रसिया तो .. .. ।"

अच्छा जाने दो, किसी को भजकर घर से दवा—अच्छा ।"पास के नीम के पेड पर बहुत सी चीटियां लगातार चढ रही थी । लोगों शैड की चिमनी का धुआ अब बद था पार्क मे हल्की सी काली सास जम रही थी । साईकिल पर कब बैठ गई थी—महसूस हुआ तब जब कई निगाहो ने बारी बारी से ऊपर से नीचे तक देखा—सभी देख रहे हैं उसे ।

घर पर शर्मा जी चुप्पी साधे पडे थे । डिम्पल सो गया था । शर्माजी की देह हल्की काली हो गई थी, खासी मे कफ की आवाज थी ।

"आज बडी देर लगी ?"

'हा देर हो गई । फिर वही चुप्पी । मिथलेश का भय अब दुख मे बदल गया छलछलाई आखे उपर उठी फिर लौट आई, पडोस के घर का धुआ आसमान मे धुमड रहा था ।" क्यो, इतने चुप क्यो हो ? शर्मा जी मिथलेश के कन्धे पर सर देकर रो पडे—वह भी रोयी, कौन समझाये ।

खाना बनाने बैठी तो लगा सिर का दर्द अभी ठीक नही हुआ था । स्टोव ने पहले धुआ छोडा फिर जलना शुरू किया । सो गये क्या ? कोई उत्तर नही था । पहले चाय दू, या दूध रख दू ? कफ की घर-घराहट बढ गयी थी । स्टोव पर दूध रखा । एक मूर्छा सी शर्माजी की पुतलियो पर छाती जा रही थी कोई उत्तर नही ।

गाढा अधेरा । कमरे बद एक गौरेया खिडकी के शीशे पर चोंच मार रही थी । डा० मेहता को फोन किया । आधे घण्टे मे व आये बोले—हास्पिटल ले जाऊंगा । एम्बुलेंस आयी मुहल्ले के बहुत से लोग आ गये थे, मुह पर चुप्पी जडे बडी बडी आखें लिये खडे रहे ।

हास्पिटल वह साथ गई ।

"डिप्थेरिया है । आप चिन्ता न करें । मेरा एक स्टूडेन्ट रात भर

गहा रहेगा। तेतीस तेतीस रूपयो के ये तीन इन्जेक्शन , डाक्टर ने मिथलेश शर्मा की शकल देखी, अच्छा हो जायेगे।" डाक्टर ने समझा बुझाकर वापस किया। मेडिकल कालेज मे नवाबी स्थापत्य के गुम्बज अ धेरे म किसी ऊचाई तक गुम हुये जा रहे थे। गेलरियो मे चलते दीवान, आदमी, मरीज सारा कालेज हास्पिटल जैसे गुम सुम हो चलते रहने वालो का घर। रास्ते भर सिवाय हाथ जोडकर रोने के और क्या चारा। बार बार डिम्पल को ढकती पर लगता कि ये कपडे छोटे है छोट है।

घर आकर देखा तो स्टोव अभी तक जल रहा था भगौना एक दम लाल, दूधकी जलन की गध कमरे भर मे थी। जल्दी ही हवा निकाली। कमरा एक दम चुप हो गया तो डिम्पल रो पडा, रोता रहा फिर खाली स्तन चूसते चूसते सो गया। रात गहरे समुद्र सी गहरा रही थी।

घुप्प अ धेरा बाहर सडक पर सरकती हवा का स्वर हवा से हिलने से दरवाजो का खासना। बस, कोई कुत्ता भी नहीं भूक रहा। ठड है। कभी लगता क्या न हैड से समझौता कर लिया इन्होने वर्तमान बेचने पर ही तो भविष्य बनता है। जिसमे साबरकार का तो स्वभाव आदमी के स्वाभिमान को चोट पहुचाना ही है। ये एक तरह से उनकी हाबी बन गई है। देखा कि विभाग वाले लिवाने आये हैं सफेद कपड पहने—पर ये जिद पर है नही जाते—वह कितनी हस रही है बाल खोले खम्भे के सहारे।

फिर सब कुछ मौन। दम साधे चुप अ धेरा। दीवार घडी ने तीन बजाये और फिर पूववत व्यस्त हो गई। अन्धेरे ने फिर पर्ते खोली– अस्पताल मे कितनी भीड है कोई लाल कम्बल ओढे लेटा है सफेद पैर कपडो म से दिख रहे हैं बफ से। कोई कह रहा है रात ही आये थे डिप्थेरिया था, पैर छुये तो कम्बल सरक गया आखे आधी खुली आधी ब द। वह चीख पडी, डिम्पल डर गया, रोने लगा। बाहर कोई पुकार रहा था। उठकर किवाड खोली, रात भर की ठिठुरी

बर्फीली हवा भीतर घुस आई। दूर गार्डन पर कोई जा रहा था– वापस लौट गया? सन्नाटा और कोहरे का पाउडर पोते काली रात। 'क्या करूं।'

कमरे में शाम से बन्द चिड़िया ने पर फड़फड़ाये द्वार तक जाकर फिर बुझे बल्ब पर आकर दो बार चीं चुटी, चीं चुटी की और चुप हो रही।

कम्बल ओढ़कर चारपाई पर बैठ गई, घड़ी का मुंह ताका। संभाल कर कानों से टोप्स उतारे– उसी दिन जैसे नये दिख रहे थे। उसी गुलाबी शाम से, सूखे बालों में तेल नहीं डाल पाई थी और सूखे भूरे बाल इन्हें बहुत पसन्द हैं कानों ही एक लट झूम सी थी—

'अच्छा कहो तो क्या लाया हूं?'

'क्या लाये हो?'

आंखें बन्द करो। जलते हुये दो फूल। टोप्स, क्या लाये हो टाप्स, मेरे लिये लाये हो क्या, लेकर अन्दर भागी गई शीशे में देखकर पहन रही थी तो पीछे से दोनों बाहों में घेर लिये, एक टीका लगा दूं काजल का, जानती हो मीनू आज पहली के मिली है सोने के फूलों के साथ ....।'

बल्ब पर बैठी चिड़िया फिर फड़फड़ाई। अन्धेरा और अन्धेरे में हथेली पर वे दोनों टाप्स फिर वही घिरता तोड़ता हुआ स्वप्न लाल कम्बल और बर्फ से ठन्डे पैर और वही बर्फ उसके मन में जम कर सख्त हो रही थी, डिम्पल को चूमा, फिर टॉप्स कागज में लपेटे रुमाल में लपेटे और पर्स में डाल लिये। बिस्तर छुआ ठीक किया खुद को ठीक किया और लेट रही।

स्टेशन पर किसी ट्रेन की लम्बी व्हिसिल सुनाई पड़ी।

क्या पांच बज गया। दीवार पर की घड़ी बन्द हो गई थी।

किवाड खोल कर बाहर को भाका तो जी टी. रोड पर कोहरे मे लिपटी बीस पच्चीस गाडियो की लम्बी कतार जा रही थी— बैलो के गलो की घटिया रात को सुला रही थी। भागकर लौटी सुबह हो गई चिडिया ने पर फडफडाये, फिर दो वार चीचूडी चीचूडी की और बाहर अन्धेरे और धुयें में खो गई।

बाहर वगल के मकान वालो की विजली जली तो रोशनी का एक टुकडा सीढियो पर बिछ गया। सलाखो मे बटी रोशनी और नहाते हुये दत्त बाबु की छाया—

'मगल भवन अमगल हारी— रामा हो रामा',

नहाते वक्त वे रोज यही गाते है।

उसने जल्दी से ताला बन्द किया। भीगी सूनी सडक पर कदम बढाये तो एक रिक्शे से टकराते टकराते बची। डिम्पल को सभाला और फिर भाग चली। चौडी सडक पर दो मेहतर एक साथ भाड़ू लगा रहे थे। दूधियो की साइकिलो के भोपुओ की आवाज दूर से पास और पास से दूर छायी थी। आसमान कत्थई हो आया था। सप्तऋषियो का समूह नीचे और पूरब की ओर खिसक आया था।

मेडिकल कॉलेज के गुम्बदो को अन्धेरा उगलता जा रहा था। अन्दर गई।

'डा० मेहता आज रात यही रहे, बडे, भले हैं, पर किसी की जिन्दगी का क्या, कोई क्या करे।' कहने वाले की शकल नही देख पाई जैसे सब कुछ जम गया हो सब कुछ। फिर घबरा कर अन्दर गई।

रात वाली नर्स ड्यूटी से वापस लौट रही थी। लाल कम्बल ओढ़े सोते हुए मरीजो की कतार लम्बा सा हाल, कहा पहचाने। सूरज की एक किरन नारगी सी शीशे से अन्दर घुसी।

अचानक जिस बेड के पास वह गयी तो डाक्टर ने अपने ओंठों पर उंगली रखकर स्वर दिया 'शिश्श ऽऽ', उसने व्याकुल आंखों से डाक्टर को देखा। किसी को आश्वासन का हाथ देते वे फिर निकल गये।

बेड की सिरहाने की खिड़की के शीशों पर जमा कोहरा अब बह रहा था और मिथलेश शर्मा दूसरी सूरज की किरण के इन्तजार में आहिस्ते से स्टूल रखकर खिड़की के पास बैठ गई।

□ वातायन

[व्यंग

अपना होना
(एक)

स्नो पैलेस,
दूद हिल, शिमला
६-८-६५

मलवा !

बहुत दिनो के बाद तुमने मुझे याद किया, फिर भी दोष मुझे ही दिया। अध्यापिका हो न, शायद लडकियो पर यो ही दोष रोपती होगी। वैसे यह सच है कि मैं अब कही भी पत्र नही लिखता। ठोक पीट कर ऐसा ही बना दिया गया हू। तुम्हारी अपनी बातें दोहराऊ गा नही पर मेरे बनने, बिगडने मे, और अपने मे भी तुम्ही दोषी हो। तुम्हारा वैधव्य मुझे बहुत खलता है, पर यह तुम्हारे पति की तुम्हे देन है, सजोये रहो, उम्र के बाद उतार देना।

मैं अच्छा हू, जहा से यह पत्र लिख रहा हूँ यह शिमले का सबसे अच्छा होटल है 'स्नोपैलेज' पथरीली जमीन के बावजूद भी इन्होने मिट्टी के गमले और क्यारियो मे कुछ सफेद फूलो के छोटे-छोटे पेड लगा

रक्खे हैं। तुम 'तो जानती हो कि मुझे सफेद खुशबूदार फूल कितने पसन्द हैं, पर मेरी पसन्द से क्या होना है और न तुम्हारे जानने से ही कुछ होता है। मैं इस 'कैफे' के एक ओर सबसे अलग सीट पर बैठा हूं। मेरे सामने की सीट खाली है, शायद खाली ही रहेगी। जो भी आते हैं दो साथी आते हैं चाहे 'मेल' हो,'फीमेल' हो। मैं अकेला आया हूं और मेरे जैसा शायद इस दुनिया में कोई अकेला नहीं है—शायद नहीं है। बगल की खिड़की का परदा रह रह कर उड़ता है पीछे की ओर ढलाव है, पहाड़ी खेत है, करीब दो फर्लांग की नीचाई तक छोटे छोटे गाव हैं। इस होटल पर के बादल नीचे उन गावों तक पानी बरसा रहे हैं, पिछले दो हफ्ते से पानी लगातार बरस रहा है, कोई अन्तर नहीं बस आज थोड़ा तेज और हो गया है। दूर की पहाड़िया बादलों के साथ एक रूप हो रही हैं। बाहर और भीतर की रोशनी में बहुत थोड़ा सा फर्क है यहा भी वही ऊंघती सी बेहोश रोशनी है— जैसी धुंधली भीगती हुयी बाहर है। मन कहता है इसी बरसते में कहीं चला जाऊं—जहा ये मौसम हमेशा रहता हो, और इसी बरसते पानी के साथ घुल कर बहजाऊं। पर शायद यह भी पागलपन है।

लोगों के सिगार और सिगरेटों का धुआ इस कमरे में भर गया है, जैसे हुनिम खुशबू के बादल उड़ रहे हैं। धीमे, बहुत धीमे बजते हुए बैण्ड की धुन इन्हीं के साथ कमरे में तैर रही है। सब कुछ न कुछ पी रहे हैं, मैं—मैं नहीं पी रहा हूं, कभी पीता नहीं, ऐसी कोई बात नहीं है। पर सच तो यह है कि अभी तक दो तीन बार और एक पैग से ज्यादा कभी पी नहीं पाया, वह भी अपनी इच्छा से कभी नहीं, पर आज पीने के इरादे से ही आया हूं।

आज ही 'पे' मिली है। लोग कहते हैं पीने से गम गलत होता है पर मैं कैसे बताऊं दो पैग लगातार पीने के बाद भी इस भीगे मौसम में भी पूरे होश में हूं। सर्दी अलबत्ता कुछ कम है और अन्दर का दुख कुछ और निखर आया है। लग रहा है इस सारे कैफे में सिर्फ मैं बैठा हूं, सिर्फ मैं, बस मैं ही और मेरी बातों को ये सब महसूस कर रहे हैं,

[उग्रह

घर या मेरी पत्नी को। मन में मेरी शादी की राय बिलकुल नहीं थी तुम ही पिताजी ने इस जिन्दगी के साँचे में ढाल दिया और जब मैंने बदलना चाहा तो सब कुछ जम कर सख्त हो चुका था। तुम नहीं जानती कि गिरिजा पहले से ही दोस्ती मोटरों में कितनी दक्ष है, उसके ठीक एक दर्जन भाई हैं, पर जान सभी ऐसे ही हैं क्या ? कि वे ही इतनी बेवकूफ और चालाक है कि सभी की निगाहों से बचकर उमर और अवसर का पूरा फायदा उठाती रही।

मुझे तो जो गिरिजा मिली। मैं ऐसा कुछ अनुभव ही नहीं कर पाया कि यह क्वारी थी क्या, एकाध बार आई गई तो दूर रहा लगता है दो-तीन बच्चों की मा रह चुकी हो। कभी कभी बड़ी सीझ लगती है। कुछ कह देता हू तो उसी अल्हड़पन से बिगड उठती है, कहती है तुम बडे खूसट हो— हा हू, तभी तो कह लेती है। यह शब्द लडकियो के मुह से सुनकर मुझे बहुत गुस्सा लगती है पर क्या कह भी जाता हू। रात में शोर मचाना भी ठीक नहीं। मुझे क्या दुख है क्या अभाव है ? यह जानने की तो उसने कभी इच्छा नहीं की, बस एक अबूझ आग है उसके पास, अतृप्त वासना, खुद जल रही है, उसी में मुझे भी जलाना चाहती है। जाने कितनी आग उसमें सिमट कर एक रूप हो गई है। मुझे उसमें कोई रुचि नहीं और वह भी मुझमें उतनी ही रुचि लेती है। जितनी एक गाय एक मवेशी अस्पताल के बैल में।

मशीन के एक सक्रिय पुरजे की तरह मैं भी सभी कुछ करता हू पर अपनी इस जडता और विवशता पर कितनी ग्लानि होती है।

'और कुछ बाबूजी।'

'ऐ हा, एक पेय और ले आओ'

'जी बहुत अच्छा,'

मैं भूल ही गया था यह होटल है, हा तो कह रहा था, जब से पत्र आये हैं उसके इस बार— या जब से मैं यहा आया हू, कोई पत्र

उसका ऐसा नहीं आया जो मुझे एक परसेन्ट भी संतोष दे पाता। सच मैं इन पन्द्रह दिना से, जब से यहा आया हू, फूटी कौडी पास नहीं थी। सब शेष रुपयो से किराया भरकर यहा तक आया था। दो दिन या ही अनखाया ही घूमता रहा पर यह हो नही सकता न, यही तो आदमी हार जाता है। फिर दूसरे साथी से उधार लिये, दो दिन चला। उक्ता कर जी ताड कर दो दिन तक मकान तलाश किया कि गिरिजा को बुलाकर रखने पर कम से कम महीने भर राशन का इन्तजाम तो करूगा ही, साथ ही उसे कुछ सुधार भी सकू गा, पर न हो सका। इधर बडे शहरो मे हम छोटे वर्ग के लोगो को मकान ही नही मिलते-- तो मैंने समझा कर लिखा था कि मकान नही मिल सका है और वह रोज, रोज लिफाफे भेजने से क्या फायदा। फिजूल खर्च होता है और आज-कल तो मैं बिलकुल फक्कड हो रहा हू। तो लिखती है कि खत डालने तक को पैसे नहीं थे तो शादी किस बूते पर की थी, ठीक ही कहती है, पर बता दोषी कौन है। सच म, मुझे समझने वाला तो कोई नही और . ।

भैया आये थे कह गये 'भाई कम से कम पचास रुपये तो घरखच को भेजते ही होगे नही तो गुजर हो ही नही सकती', हा नही हो सकती, बिल्कुल ठीक है। पर मैं नव्वे रुपये पाने वाला क्लक, क्या कैसे होगा। यह जान कर भी कि मेरे ऊपर कितना कर्जा पहले से है, यही कहा कि मैं चाहू तो भेज सकता हू। तो भी मेरे शरीफ और कमजोर आदमी ने हा करदी और पहली को 'पे' मिली तो आख मूद कर पचास पूरे-पूरे घर भेज दिये। पच्चीस मकान किराये के भेजे बयालीस पिछले महीने के खाने के ड्यू हैं, और पचास इलाहाबाद, गोरखपुर बनारस इन्टरव्यू गया तब ले गया था।

इन्टरव्यू मे भी कुछ न हुआ। नालायक यो ही बुलाते हैं, इलाहाबाद तो पी एस सी का इन्टरव्यू था पर वहा आदमी पहले से था उसी को कनफर्म कर दिया। यह नई धाधलेबाजी पी एस सी म खूब चली है, कि पोस्ट निकालते हैं एक रुपये का फार्म देंगे आठ रुपये

फीस के लेंगे और इन्टरव्यू मे बुलाकर किराया खर्च करवायेंगे सिर्फ रिजेक्ट करने को।

जाने क्या होगा ?

मेरी जरूरतें मुह फैलाये तीसो दिनो पर अधिकार जमाये पडी हैं और उसके खत पर खत आते हैं डिमाड पर डिमाड होती है। समझाने पर कहती है या तो बुलाकर अपने पास रखलो नही तो अपने पीहर चली जाऊ गी। सबका अपना मन है, मेरा किसी पर कोई अधिकार नहीं। लिखा था बेबी का फीता मैंने इस्तेमाल कर लिया है है तुम उसे दूसरा लेकर भेज दो– तो जानती हो मुझे कितनी गुस्सा आई, सच कही कोई ऐसा नही जो मेरी व्यथा को समझना तो दूर रहा सुने भी।

अपने कालेज के प्रिंसिपल के यहा गया था उनके यहा एक अध्यापक की जगह खाली हुई थी, आग्रह किया कि मुझे रखलें, तो पूछने लगे वहा क्या पा रहे हो। मैंने कहा नब्बे तो बोले नब्बे कम तो नही होते। वह क्या जाने कमी किसे कहते हैं, डेढ हजार, मिलते हैं न। क्या जाने कर्ज और उनके तकाजो मे कितना तिरस्कार होता है।

कहने लगे हमारे यहाँ तो तुम्हे मुश्किल से सत्तर रुपये मिलेगे– पहले तो मैं सोचता रहा और वे छाते की नोक से गीली जमीन मे पडे एक गड्डे को गहरा करते हुय मुझे देखते रहे।

मैंने हा करदी तो उन्हे आश्चर्य हुआ। कहने लगे वैसे मैं तुम्हे देता तो पूरे एक सौ पच्चीस ही, पर एक तो एड नही मिलती पूरी हमे, फिर ऐसे ही यह स्कूल हमे कालेज बनाना है। स्कूल गया तो सच म स्कूल–स्कूल न होकर व्यापार गृह लगा। कोई कैसी भी सुविधा नहीं किसी को। बात बात पर विद्यार्थियो पर 'फाइन' अध्यापको का शोषण कम विद्यालय के नाम पर एक शोषण केन्द्र है यह, छोटे शब्दो मे यह कहू तो कुछ भी अतिशयोक्ति नहीं। मन और दुखी हुआ, जी मे आया कि स्तीफा दे दू। पर यह सोच कर चुप रहा कि मेरे जिस सिद्धान्त-

वादी श्रौर आदर्शपूर्ण व्यक्तित्व पर तुम रीझी थीं– यदि मेरी सामर्थ्य उसे समय श्रौर समाज की चक्की मे बचा नही सकी–तो वह सब प्रवृत्ति इस नई पीढी मे भर सकू गा यहा। मुझ वीतरागी की कल्पना इन रूपो मे साकार हो यही सोच कर चुप रहा।

वैसे, सच– तुम तो श्रध्यापिका हो, कितनी प्रशसा तुम इस व्यवसाय की करती थी– पर मैंने तो पाया कि शोषण श्रौर कलह इसमे सबसे अधिक है। यहा सभी युधिष्ठर है श्रौर सभी जुश्रा खेलते है।

बोझिल मन लेकर घर लौट आया।

कल भैया का पत्र आया था कि मैं 'वाइफ' को समझा कर लिख दू कि वह ठीक से रहे, उसके श्रौर मन्मथ के आचरण श्रच्छे नही हैं। अन्धेरे, उजाले– श्रकेले मे उन्होंने दोनो को श्रालिगन मे देखा है।

तुमने जाना ! इस पत्र की हर नोक कितनी जहरीली श्रौर नुकीली थी जो मेरे मन की दरारों मे चुभकर ठुक गई, अब ये घाव कभी श्रच्छे नही हो सकेंगे। आज ही गिरिजा का पत्र श्राया है लिखा है मन्मथ को लेकर श्रपने पीहर चली जा रही है। मेरे पत्र का यही उत्तर दिया है उसने। इस मन्मथ को तो तुम जानती होगी वही मेरा भतीजा है, दूर के रिश्ते का। माहुल्ले की कोई लडकी बची नही है उससे। तुम्हें भी तो उसने कई बार छेडा था। सच मे, निगाहे बारिश मे दूर तक भटक जाती हैं, फिर भीग कर लौट श्राती है। सर पर तीन सौ पैंसठ रुपये का कर्ज श्रौर तकाजे, तकाजो मे घृणायुक्त निगाहे, श्रौर बेशर्म मैं।

क्यो मैं इतना श्रकेला हू ? ये श्रकेलापन मुझ से श्रब सभलता नही ....।

अरे ! देखो, ये पेग यो ही रक्खा है, तुम्हारे स्वास्थ्य की कामना कर के पी रहा हू। श्रभी तो ये पन्द्रह रुपये है मेरे पास-- सवेरा तो कल होगा। पानी यो ही लगातार बरस रहा है। पर मुझे नशा नही

चढा है।

भविष्य मे पत्र नही देना उत्तर नही दूंगा— क्या होता है इ
औपचारिकताओ स।

कामना है तुम सुख से रहो।

तुम्हारा—अजीत

☐ 'मधुमती'

'अपना होना'
(दो)

पूरे छ वर्ष बाद अलका का पत्र आया है। छः वर्ष पहले मेरठ था तब एक लम्बा पत्र आया था। अलका का स्वभाव है या तो पत्र पर पत्र या सालों की डुब्बी और फिर जब भी पत्र आए, प्रश्नों पर प्रश्न, पर वह तो पुरानी बात हो गई। मेरठ छोड़ा इससे पूर्व इलाहाबाद छोड़ना पड़ा था। लगता है जैसे अपने वश में कुछ नहीं होता। हम जैसे सारे प्रयत्नों से उसी ओर भागते रहते हैं जहां होना होता है। यहां आना था, आना पड़ा, वर्ष बीत गये तब आज अलका का पत्र मिला है। लिखा है 'निमन्त्रण-पत्र' और पत्र देखकर आश्चर्य करूंगा। आश्चर्य तो अब क्या करूंगा, पर कैसा लगा है कुछ कह नहीं सकता। अपने में खोया कोई अंश जाग उठा है और अपना एक विचित्र होना अनुभव किया है। सोचता रहा हूं यह चालीसवां वर्ष पार करने के बाद

उसे विवाह का क्या चाव हुआ। भविष्य में आने वाले घरे हुए प्रबल शरीर में अकेलेपन से भय सा गई, या कि इस आयु में भी शरीर को असन्तुष्ट नहीं रखना चाहती। वैसे अब तक जहां जो कुछ परिणाम जीवन में देखे वे सब अनुमानित बिलकुल नहीं पाए। हमेशा हर जगह जीवन में हर मोड पर जो योगफल मिले हैं उन्हें देखकर चौंकना पडा है। जाने मैं ही बुद्धू और मूर्ख हूं या कि यहां की हर घटना की नियति ही यही है।

अलका की ही बात सोचता हूं। मैं छोटे से कद का अनाकर्षक व्यक्तित्व का साधारण लड़का। बस तसवीरें बनाने का शौक था जो भी अच्छा लगता उसी का पेंसिल स्केच बाधने का प्रयास करता। पर यह कभी सोचा भी न था कि अलका, इतने सभ्रान्त परिवार की लडकी, उससे मेरा प्यार हो सकता है और वह भी ऐसे स्तर पर कि मुझे लगा था कि मेरे लिए वही उतावली है। मैं तो उसकी प्रतिक्रिया मात्र हूं और आज तक सहेजकर रखे उसके वे पत्र निकाल कर पढता रहा हूं, क्योंकि मेरे लिए मेरा व्यक्तित्व वही है और उनके उन पत्रों से आज का पत्र मिला रहा हूं। कितनी यात्राएं करके आया हूं। यहा आ पडा हूं तब फिर यह पत्र मिला है। लिखा है आश्चर्य करूगा।

अब क्या आश्चर्य करूगा। उस दिन अवश्य हुआ था जब उसने मेरे पहले प्रेमपत्र के उत्तर में लिखा था। मुझसे पहले ही वह मुझे चाहती रही है। विश्वास नहीं हुआ था, पर विश्वास उसके उस बेहतर मिलने ने मुझे करा दिया था। फिर अपने विवाह मण्डप में वह अचेत हो गई थी, मेरे समझाने पर वह बहुत रोई थी। कहा था कि पौरुषहीन हो, क्या भगाकर नहीं ले जा सकते थे? पर मेरा सोचना अलग था। मैं उससे प्रेम करता था, यह वह आज भी मानती है। न मानी होती तो आज ही क्यों ये निमन्त्रण और पत्र आता और यह मेरा उद्देश्य कभी नहीं रहा है कि मैं जिसे प्रेम करू उसे इच्छानुसार तोड़ू, सजाऊ, मसलू और भोगू। हमेशा चाहा है और इच्छा हुई है कि प्यार करू। जहा है वही न्योछावर हो जाऊं उसे बदलूं नहीं। भय रहा है कि

[उग्रह

प्यार तो मैंने उसके इसी रूप को किया था, जो था। मैं पत्नी बना भी लेता तो न जाने वह पत्नी कैसी होती। हो सकता है मेरा बिम्ब टूटता और आज से भी भारी दुख मेरे और उसके साथ लग जाता। विचित्र लगा था अवश्य। बहुत। उस दिन धुले, बधे, रुखे बालो मे, सफेद साडी मे मेरे विवाह पर आई थी। सिन्दूर नही था, पुछ गया था, मुझे बधाई दी थी।

मेरे विवाह पर अलका ने मेरे वे सारे पत्र उपहार स्वरूप वापस कर दिये थे, मुझे विचित्र हसी आ गई थी। क्या वह सब इसस अनहुआ हो सकता था। पर मुझे अच्छा लगा था। अब कभी मन होता है तो पत्रो म उसे और स्वय को एक स थ देख पाता हू।

निमत्रण पत्र म पढा कि उनके य भावी पति मेजर' है। अन्तत: उसे एक पौरुषवाला व्यक्ति मिल ही गया। आश्वस्त होगी, यही सोचकर सुखी हू। गिरिजा के विषय म पूछा है, मेरी पत्नी के विषय म। एक दिन उसने भी खीझ कर कहा था मैं बहुत ठडा आदमी हू। अलका ने जो एक दिन कहा था कि मैं पौरुषवाला नही हू उसी के परक्रम यह भी था, मुझे उन क्षणो मे बडी अरुचि हो गई थी समग्र नारी वग स कि क्या देह की आग ही उसके लिए सब कुछ है। रूप, गन्ध सौन्दय, आनन्द यह सब कुछ नही। सच कहता हू— मै आनन्द ले रहा हू जीवन का यह सोचकर कभी मिल ही नही पाया उससे, उसी के निमत्रण नही चुकते थ और जीवन मात्र जैसा आफिस म बाहर भी घर पर भी बसा हो। कही भी अपना सा मन का सा, कुछ नही, अन्त म एक दिन यही कहकर कि मैं बहुत स्वयकेन्द्रित आदमी हू। वह ऋतु और पवन को लेकर अपने घर चली गई है, मा के घर। न मैंने बुलाया तबसे, न वह आयी। बस सुशीला मेरे साथ ही रहती है, और कभी-कभी सुशीला के विषय म भी सोचकर चिन्तित हुआ हू कि यह भी उसी जाति की है, कही या ही तो दुखी नही होगी, कोई दूसरा तो दुखी नही होगा। पर उसका चेहरा देखकर स तोष कर लेता हू। मा के अभाव मे सदैव गम्भीर सी-चुप और बडी समझदार सी लगती रही है।

मेरी आवश्यकता, गाने की रुचि को उनने स्वयं ही समझा है, मुझे कहना नहीं पड़ा है। बस यही सोचता हूँ अकेले घर में कैसे रह पाती होगी। क्या सोचती होगी। हम माता पिता से क्या आदर्श मिले उन्हें। सब विचित्र सा लगने लगता है।

अलका ने लिखा है अपने समाचार लिखूँ— और निमन्त्रण पत्र पर अपनी प्रतिक्रिया दूं, क्या लिखूं ?

लगा करता है, मैं जो जी रहा हूं, कुछ पराया है उसे निभा रहा हूँ, क्योंकि जहां अपना समझा और पहचान लेना, अपनाना चाहा तो वह नितान्त पराया निकला। यहां, जहां रह रहा हूं, आधा लॉज किराये पर उठा हुआ है। आधे में पंजाबी ओनर खुद रहता है। उससे मिलना तभी हो सकता है जब वह किराया देने आता है।

इधर चार कमरे हैं। पहले दो कमरे, बाथरूम, मेरे हिस्से में है। लैट्रिन कम्बाइन्ड है। चारों कमरे इन्टर कनेक्टेड, मेरे दूसरे कमरे से जुड़े हुए कमरे में विश्वविद्यालय के दो छात्र रहते हैं, एक श्रीगोपाल शर्मा, एम० ए० दर्शन का छात्र, दूसरे ग्रीष्म श्रीवास्तव, एम० ए० हिन्दी साहित्य का छात्र। दोनों का दूसरा वर्ष है इस लाज में। कुछ लोग सराहते हैं, इतना किराया देकर दूसरे वर्ष रहने शायद ही कोई आता है। अन्त के कमरे में मिस्टर दीक्षित रहते हैं। भले हैं, हंसमुख हैं। अक्सर ही हम लोग इकट्ठे नहीं हो पाते। सबका अलग अलग समय है।

आठ दिन हुए तब घूम कर लौटा था, देर हो गई थी। सुप्राभा ने कहा दीक्षित अंकल आए थे, आपको बुला गए हैं, कुछ आवश्यक काम है। खाना खाकर दीक्षित के कमरे पर गया तो वह मुझे देखकर हमेशा की तरह अस्वाभाविक पतली आवाज बनाकर बोले कहां रहते हो यार, दीन-दुनिया की खबर रहती है कुछ ? वैसे वे जब भी कभी छुट्टी होती, लॉज के हम सभी लोग होते हैं तो सभी के पास जाकर वे कुछ न कुछ स्पष्ट खबर देते हैं जैसे यार सुनो सायरा ने

[उग्रह

दिलीप कुमार को डाइवोर्स कर दिया।

'अच्छा कब ?' कोई पूछता है।

'तुम कहां रहते हो यार। तुम्हे कुछ पता नही। सुनो यार अपने बच्चन हैं न, उनके लडके ने मीना से शादी कर ली, यार क्या सूझा उसे।'

'किसे ?'

'मीना को।'

'कब ?'

यार कहा रहते हो, तुम ? पर इस बार वह कुछ गम्भीर था। आहिस्ता से बोला इधर आओ मेरे साथ, और उस दरवाजे के पास लाया जो बन्द था, कहने लगा चुपचाप देखो। मिस मारग्रेट थी, निर्वस्त्र। फर्श पर दरी बिछाए श्रीगोपाल उनके साथ व्यस्त था और ग्रीष्म उसके शरीर मे सवेदनाए उभार रहा था और मारग्रेट आखें बन्द किये लेटी थी, अन्दर बहुत हल्की रोशनी थी।

ऊपर से बीच तक एक आग दौड गई थी और चेहरा तपने लगा था मेरा। चुपचाप लौट आया था। रात भर नीद नही आई। सुबह ही सुशीला को प्रयास करके कालेज हास्टेल मे भरती करवा दिया था, पर फिर अपना होना अजीब सा लगा। ठीक वैसा जैसा उस दिन जब अलका को विदा होते देखकर लगा था।

ये दोनो लडके ग्रीष्म और श्रीगोपाल कितने सुसभ्य और शालीन दिखते थे और मिस मारग्रेट भी जब भी कभी मिली थी। बहुत शालीन, सौम्य, हसमुख। पहली बार जब मिला था। इन्ही के कमरे मे मिला था। माथे तक कटे झूलते बाल, चाय के रग का शरीर और कॉसे बजने जैसी आवाज़। उसकी जाने कौनसी बात थी ऐसी जो कभी-कभी

अलका से मिल जाती थी। इसीलिये जब भी कभी मिलती, मुझे लगता देर तक बात करूं। भले ही वह मेडीकल कॉलेज होता, श्रीगोपाल का कमरा होता। पहली बार मैंने पूछा था आपका नाम।

'आप तो मेडिकल में-- प्रीवेन्टिव मेडिकल सेक्शन में आर्टिस्ट हैं न।'

'आपने कैसे जाना ?'

'मैं वहा फोर्थ इयर की स्टूडेन्ट हूं।'

'आप .. ?'

'मधुमती।'

'जी।'

'अच्छा नही है क्या ?'

'बहुत अच्छा है, तब तो आप सुबन्धु घोष को भी जानती होंगी वह भी फोर्थ इयर में है।'

'आप कैसे जानते है ?'

'यों ही बस रवीन्द्र संगीत अच्छा गाते है और परमहंस के अच्छे भक्त हैं। एक बार कुछ चार्टस् बनवाने आये थे अपनी थीसिस के लिये तो अपने कमरे पर ले गये थे-- अच्छा गाते हैं।'

'ये भी बहुत अच्छा गाती है, दादा। उतना ही जितना आप पेन्ट कर पाते हैं।' ग्रीष्म ने कहा था और मारग्रेट ने सुनाया था।

'...... जल बिच जैसे मीन पियासी।

.... आजा रे मैं तो कब से खड़ी उस पार ...।'

उसकी आंखें अच्छी थी, बहुत सा व्यक्त करने वाली। तब से

कहीं भी मिलती तो औपचारिक-सी, हलो के बाद परिचित स्वर भी मिलता— 'कैसे हैं ?'

'अच्छा हूं,' और भली मुस्कान लेकर मैं विदा होता।

पलटा ने जो लिखा है आश्चर्य करेगा ... अपनी प्रतिक्रिया लिखूं .. क्या लिखूंगा। परसों जो देखा था वही नहीं भूला— सुबह से ही मन बड़ा उदास था। धर्मयुग का बगला देश अंक आया था और इससे पहले अन्य पत्रों में भी देखा था। क्यों आदमी-आदमी से लड़ मरना चाहता है। क्यों विध्वंस चाहता है। क्यों नृशंस हत्यायें करना, गर्भवती स्त्रियों को रेप करना, उन्हें छटपटाकर मरते देखना उसे अच्छा लगता है। क्यों अपने को अलग-अलग नामों से सम्बद्ध करने, गाली देकर एक दूसरे के मांस में अपना चेहरा पोतना चाहता है और कितना मूर्ख है, किसी ने कहा— फायर। और निर्दोष ही एक दूसरे को मारना शुरु। परिचित न होने पर भी शत्रु का नाता क्यों ? क्या कारण है, क्यों मारें। रुदन और रक्त। हत्याओं का क्रम शुरु कर देता है किसके लिये। कौन है जो उनसे सोचने की ताकत छीन लेता है।

मन बहुत खोखलाया सा हो गया था सो उठकर सोचा प्रकाश के यहां हो लूं। प्रकाश, यहां छः माह हुए, ट्रांसफर होकर आया था। तब उसका पत्र आया था कि आकर मिलूं।

जा नहीं पाया था।

फिर पत्र आया था। आए नहीं, मैं गम्भीर रूप से रोग-ग्रस्त हूं। आफिस नहीं गया कैजुअल के लिए एप्लीकेशन भेज दी। मकान का पता लगाता घर पहुंचा।

इसी में रहते हैं ? मैंने किसी अपरिचित से पूछा था।

'हां, पीछे उस ओर सड़क की ओर मेन गेट है। पूछकर चल रहा था, पीछे की ओर खिड़की है। आधा परदा हवा से उड़कर हिल

गया था। साफ पहचान पाया था नामी हैं, प्रकाश की पत्नी— बाहों के घेरे में बसी हुई। फिर उसने उसके चेहरे को अपनी ओर कर अपना चेहरा उसकी गर्दन में छिपा लिया था।

'क्या करते हो? कोई पूछ रहा है।'

मेरे चेहरे पर मुस्कान खिंच आई थी। प्रकाश हमेशा ऐसा ही रहा है अच्छा वाकसर फाइटर और जिस परिवार में घुसा उस परिवार की किसी लड़की को उसने छोड़ा हो याद नहीं पड़ता है। सीतापुर बारात तक में विश्वनाथ के विवाह में हम दोनों गए थे। मैं गरमी के कारण धर्मशाला के मंदिर के द्वार पर सीमेन्टेड फर्श पर ही सो गया था। रात की हाथापाई की आवाज से जाग गया। देखा प्रकाश ने किसी लड़की को पकड़ रखा है।

'दादा बोल्यो न। पहले हम निपट लैंय तब तुमहू आय जाव,'

मैं उठकर छत पर चला गया था। तो यह शरीर की आग अभी तक प्रकाश पर हावी है। विवाह हुए दस वर्ष हो गए। फाटक खोलकर अन्दर आया। बेल बजाई। भाभी ने ही आकर द्वार खोला, नमस्ते हुई। पहले कमरे में ही पलंग पर प्रकाश ओढ़कर लेटा था।

'क्या अभी भी ठीक नहीं हुए क्या, प्रकाश भाई?' मेरे मन में किंचित मुस्कान थी। देखिए कौन आया है। भाभी ने मच्छरदानी हटाई तो देखा प्रकाश को पैरानेसिस हुआ था।

'कितने दिन हुए?'

'कोई छ माह हो गए।'

तब? तब? मैं भाभी की शक्ल देखता रह गया था। प्रकाश बोल पाने में असमर्थ। मुझे देखकर दोनो आखें भर आई। एक हाथ मुश्किल से उठा, मैंने ही उसकी आखें पोंछी। उसकी हथेली अपनी

[उग्रह

हथेलियों में दबाए देर तक चुप बैठा रहा। फिर भाभी के औपचारिक से पारिवारिक प्रश्नों के उत्तर दिए। मन खराब हो रहा था उठ गया, पर भाभी उसी तरह सहज थी। अन्दर से कोई निकल कर जाने लगा।

'शाम को सब्जी लेते आइयेगा।'

'अच्छा', चला गया। कौन था, मैंने नहीं पूछा।

मन और टूट गया था। आई० टी० कालेज स्टेन्ड से बस लेकर 'जू' चला आया। अन्दर एक जगह बड़ी भीड़ थी, मालूम हुआ एक नाग नागिन का जोड़ा आया है।

बड़ा सा गहरा-चौड़ा चिकना साफ सीमेन्टेड कुआँ, बीस फीट गहरा, अन्दर झांका दो बड़े अजगर पड़े थे, बीच में एक करीब पांच फीट की नंगे पेड़ की डाली गड़ी थी, उस पर एक चूहा बैठा था। गहरा चौड़ा चिकना सीमेन्टेड कुआँ, नीचे अजगर और उस पर, ठूंठ पर-बैठा वह चूहा बार-बार दो पंजों से ऊपर खड़ा होना और फिर बैठकर नीचे देखने लगता।

ऊपर चारों ओर भीड़ खड़ी थी।

मुझे लगा जैसे शरीर का रक्त ठंडा हो रहा है। घर लौटकर आया तो आश्चर्य हुआ मेरा कमरा अन्दर से बंद था। भड़भड़ाया तो भी देर से खुला, खुलते ही ग्रीष्म ने बाहर निकलकर मेरे पैर पकड़ लिए।

'तुम्हारे पैर छूता हूं हटाना मत। तुम्हारे हाथ जोड़ता हूं दा? कुछ कहना मत।'

'क्या हुआ क्या है?'

अन्दर मेरी चारपाई पर मेरी रजाई ओढ़े मिस मारग्रेट सो रही है। मैंने ग्रीष्म को देखा।

'क्यों ?' मेरे चेहरे की कठोरता से वह डर रहा था।

'देखो दादा। प्लीज, हेल्प मी, ऐसा हुआ श्रीगोपाल इसे रेजीडेन्सी ले गया। वहां युनिवर्सिटी के और लड़के भी आ गए करीब तेरह चौदह थे। मारग्रेट ने सभी को सहा है। बहुत निर्दयता से पेश आए वे सब। श्रीगोपाल को खूब पीटा है। मैं किसी प्रकार मारग्रेट को ले आया हूं। वो देखो हमारे कमरे पर सॉर है। यहां छिप गया हूं, दादा प्लीज।'

क्या करूं कुछ भी समझ नहीं पाया। पर प्रश्न तो किया ही क्योंकि मौसम में ठंड थी– मैं कहां जाऊं ? मारग्रेट थोड़ा बिस्तर पर से खिसकी आप यहां आ जाइये उसके चेहरे पर थकी हुई मुस्कान थी। मेरे मन में घृणा और दया दोनों उदय हो रहे थे। अत निर्णय लेने से पूर्व मैं दीक्षित के कमरे में चला गया। रात भर बैठा मैं उससे बात करता रहा। वह कह रहा था, यार तू निरा यो ही है और मेरे योही होने के प्रमाण देते हुए वही बोल रहा था और सुबह हो गई थी।

सुबह उन्हे विदा किया। मैंने देखा था। मारग्रेट सुबह पहले जैसी ही स्वस्थ और ताजी थी– उतनी ही शालीन।

'गुडमार्निंग राय दा ...... , चलते-चलते कहा था, कभी घर आइयेगा यू आर रियली ए काइण्ड सोल।'

आफिस आ गया। कागज, फाइल ठीक किए। ग्यारह बज गए। भूख लग आई थी। रोज डा० सविता से कहकर खाना खाने जाता हूं। आज नहीं आई, क्यो ? कभी लेट नहीं होती है।

डा० सविता एम० बी० बी० एस० फाइनल मे है आजकल। यहीं, मेरे कमरे मे साथ ही बैठती है कुछ फिगर्स बनवा रही है मुझसे। दुबली सी गोरी-गोरी बहुत आकर्षक सौम्य व्यक्तित्व, मेरे पास जो छोटा सा म्यूजियम है, दो ग्लास एलमिराज मे वहां से भी कुछ नोट करती रहती है।

आज आई नहीं क्यों। मैं बैन करता हूं, सरन्, विमोन आ जाता है।

'का है, जाव खाना खाय आव।'

'डा० सविता नहीं आई ?'

नाहीं अब ये नाही अईहैं वालि छोडि गई।'

'क्यों ?'

'अब तुम्हे का बताई। वोनो खबर नाही रहत। ऐसेन कार्ट दिहे उमिर, कायके, बडे साहब जौन रिसर्च करवाय रहे ये और डाक्टर जहीर, उन्ह पाच बजे के बाद बलाइन। वोनो हाही, नाही की बात टूई गई तीन उई अब न अइहैं।'

मैं चुपचाप बैठा रहा। थोडी देर मे साहब का आदमी आया। कहा– राय बाबू को बुलाया है।

मैं वहा गया। वडा सा सीमेन्टेड, स फ सुथरा कमरा। साहब के सामने चुप खडा रहा। उन्होने मुझे देखा। फिर अपने कागज पर कुछ लिखते रहे– 'सिट डाउन मिस्टर राय, देखिये वो स्कीम जो कल तक मिस सविता बनर्जी देख रही थी अब ये डा० सक्सेना देखेंगी। सो आई होप वी विल गेट योर फुल को-आपरेशन, डाक्टर सक्सेना आप जॉय। उनका चेहरा रोज सा सहज है वैसा ही गम्भीर। चुपचाप मैं लौट आता हूं। आज से उस कुरसी पर डाक्टर सक्सेना बैठी है।

पहले कुछ दिन अध्यापक रहा था यह सोचकर कि वे आदर्श और सिद्धान्त जिन पर शायद अलका रीझी थी, मैं सजा नही सका, नई पीढी को दूंगा। पर असफल रहा। नई पीढी स्नेह हीन, सस्कार हीन, टूटे हुए परो से जा रही है। वह कुछ भी लेना नही चाहती और विद्यालय दुकानें हैं। मुड कर यहा आ गया। आर्टिस्ट हो गया, पर पा रहा हू परिधि वही है घेरा नही टूटेगा। सीमेन्टेड चिकनी साफ सुथरी

दीवारें। नीचे अजगर रेंग रहे हैं। ऊपर भीड़ खड़ी है।

और मलया ने लिखा है आश्चर्य तो करूगा .., कोई मानदण्ड बचा है क्या टूटने को .., जो कुछ भी उसने किया शुभ है। उसका हर कार्य मुझे शुभ लगा है। बस भोगा नहीं उसे, क्योंकि मुझे सदैव लगता रहा है कि आदमी भोगी हुई वस्तु के प्रति कभी कोमल भावनाएं नहीं रखता। उसे अपने अनुसार काटता छाटता है।

सरना हैड आफिस से डाक ले आया है। कई आफीशियल पत्र हैं, एक लिफाफा व्यक्तिगत मेरे नाम है, खोलकर पढता हूं। सुबन्धु घोष के विवाह का निमन्त्रण पत्र, और उसका लिखा हुआ खत है, छोटा सा। 'आना अवश्य अपनी ही एक सहपाठिन मिस मारग्रेट से विवाह
'रहा है। कुछ विशेष आयोजन नहीं कर रहा हू। तुम्हारे आने से प्रसन्नता होगी।' पत्र लेकर बैठा हूं।

'दुई बजिगें, लच लैबें जैहो न का ?' सरना है। उठकर चलता हू रास्ते में पोस्ट आफिस है। एक तार कर देता हू अलका को— मगल कामनाएं। दूसरा डा० सुबन्धु घोष को, बधाई है। जाकर केन्टीन म खड़ा हो जाता हूं। कितनी हसी, कहकहे, प्लेट चम्मचें बजने के स्वर। कोई सीट खाली नहीं है। एक कोने पर चुप दो व्यक्ति बैठे हैं एक कुरसी है। उनसे पूछता हू और कुरसी खिसका कर वहीं बैठ जाता हू।

'हैलो डाक्टर माथुर, हैलो अग्रवाल, चलो वहीं चलो सब वहीं हैं। मेडिकल स्टूडेन्ट हैं, तीनों चले गये हैं। मैं अकेला मेज पर बैठा रह गया हू। पास की खाली कुर्सी घसीट कर फिर परे खिसका देता हू और कोहनियों पर चेहरा टिका कर मेज पर लगे शीशे में अपनी धुधली सी आकृति देखता रहता हू।

☐ आशीर्वाद.

वापसी

उस दिन भी पड़ोस मे रह रहे मिस्टर चोपड़ा, मार्केटिंग इन्सपैक्टर की पत्नी ने अपनी बेबी के लिए रेडीमेड फ्रॉक मगवाई, वह भी उसी दिन से मगवाने को परेशान हो गई और आखिर उसे बाजार से दिलवा कर ही मानी, पर यो बात आई ? कहा उनतालिस रुपये और कहा अठारह रुपये, कहाँ नादीदो की सी बात, फर्स्ट क्लास फिटिंग, फर्स्ट क्लास अस्तर।

उसके मन मे घृणा धुए की तरह कड़ुवाहट भर रही थी, दिमाग बेहद तप रहा था। वह कुछ न कहता पर इस तरह की ओछी हरकतो के लिए कई बार कहा-सुनी हुई है। उसे पता नहीं क्यो ऐसी बातें बिलकुल सहन नही होती। शुरू-शुरू मे तो उसका गुस्सा बरतनो पर निकलता था, चाइनीज टी सैट, शर्बत का सैट, कलई

की थाली तब उसे याद आते हैं, तब गुस्से की भेंट चढ़ गए। फिर हफ्तों खाना नहीं होता था। लोग पता नहीं कैसे होते हैं घर छोड़ो, होटल में खा लेंगे, पर उसमें यह कभी नहीं हो सकता है। चार-चार, पांच-पांच दिन बिना खाए बीते हैं। फिर भी गुस्सा कम नहीं हुआ है। फिर जिस दिन वह अनशन टूटा है उस दिन दोनों खूब रोए हैं। एक दूसरे को समझाया है तब खाना खाया गया है। पर ऐसे में भी कभी-कभी रमा ने यह कह दिया है कि मैं भी ग्रेजुएट हूं, सब समझती हूं पर आप इशारा तो करते, तभी फिर उसका मन चोट खाया सा तड़प उठा है पर ऐसे अवसरों पर उसने विवेक से ही काम लिया है, चुप हो जाता है। बाद में कहा है, देखो रमा तुम्हारी इस विश्वविद्यालयी डिग्री का जीवन की बौद्धिक व्यावहारिकता से सीधा कोई संबंध नहीं है, आखिर बाद में तुम्हें अपनी गलती माननी ही पड़ती है, तब शुरू में ही यह सब क्यों ?

पर परिवर्तन नहीं हुए हैं, ज्यों-ज्यों उमर बढ़ी है, सर्विस में उसका प्रमोशन हुआ है, वह प्राइमरी सेक्शन से हायर सेकण्डरी में प्रमोट हुई है, वेतन भी बढ़ा। तब से उसमें यह आडम्बर की प्रवृत्ति तथा व्यर्थ का दम्भ और बढ़ गया है और वह है कि उसे इन सबसे घृणा है।

आज ही उसे इस तरह बाजार में दुकानदार के सामने कहने की क्या जरूरत थी, पहले परसों मेरे साथ आई थी, साड़ियां निकलवाईं, देखीं, छोटे जीजाजी साथ थे। साड़ी उठाते और रमा की बांह पर रखते, भाभी तुम्हारे सोनई रंग पर तो यह फबती है।

'और वह कैसी है ?'

'हां, यह तो बिलकुल आप पर जचेगी।' सेल्समेन ने साड़ी सारी खोल दी थी, 'ये देखिए बनारसी सिल्क, और दक्षिणी डिजाइन', सुनहरी साड़ी चौड़ी लाल किनारे वाली जैसे किसी आर्टिस्ट ने अपने हाथों सजाई हो, रची हो।

रमा ने फिर पहली वाली को देखा, इस पर काम अच्छा था। सेल्समैन की आखें रमा के चेहरे पर थी, 'ऐसा कीजिए न, दोनो ले लीजिए क्या फरक पडगा, भैनजी आप भी लोभ कर रही ह भला आप सा ग्राहक नही खरीदेगा तो कौन खरीदेगा।'

'वाह भाभी ! ले डालो न पर भाई साहब थोडे ही लेन दगे। पैसा दबा कर रखेंगे, न खुद पहनगे न पहनने देंगे।' कहकर छोटे जीजाजी हसे थे।

वह भी किंचित मुस्कराया था और शो केस मे टगी झिलमिलाती साडिया को देखता रहा था। तभी एक पेयर आया था। क्या स्त्री थी बिलकुल सोना। दस मे से आठ उगलियो म अगूठिया। आख आठ तराशे हुए रचे हुए। बस सकेत भर देने से साडी सामने आई थी, उसके साथ आए उस गम्भीर से व्यक्ति ने हजार रुपए दिए साडी बधवाई और कार उड गई थी। उसके मु ह से एक ठडी सास निकली थी।

देखा भाई साहब आपने ऐसे होते हैं कद्रदान अपनी भाभी किसी से कम नही है, तीन बच्चे हो गए पर मजाल है कोई यह कहदे शादी शुदा है।'

उसके मन मे अभी तक उस स्त्री की आख और हाथ गधा रहे हैं। रमा की ओर देखता है तो पता नही क्या वह उसे बासी मादीदी सी लगती है।

'आप देखिए न। कौन सी पसन्द है इन दोनो मे से।'

वह यो ही दोना के कपडो को मिलाता है और सेरसमन स पूछता है 'यह कितने की है ?

'कीमत पर मत जाओ साहब। आप जैसे साहब भी कीमत पूछ कर कपडा देखेंगे तो कैसे चलेगा ?

'देखा न भाभी पैसा नही निकलेगा।'

उसने इस बार मजाक पर ध्यान नहीं दिया था, 'फिर भी कितने की है ?'

'अजी कुछ नहीं ये चार सौ पिचासी की है, और ये बनारसी सिल्क की तीन सौ पचास की ।

तीन सौ पचास वाली साड़ी को देखता रहा फिर बोला, 'ब्लाउज इसी में साथ है ?'

'बिल्कुल साहब, यह देखो यह पीस लगा हुआ है ।'

'और पेटीकोट ?'

'वो कितने का होगा, जी कुछ नहीं वो तो अलग से आ जायगा ।'

उसने पलट कर देखा रमा सास रोके उसे देख रही थी । कहा, पास में और भी किसी जगह देख लें, एक ही जगह क्यों ? वह पर उसने छोटे जीजाजी की ओर रुख किया, उन्होंने बाल काढ़ कर कंघा जेब में खोंस लिया और उसका चेहरा देखने लगे, पर इस बार उसके चेहरे पर गम्भीरता अभेद्य थी सो देखकर बोले, जैसा आप सोचें ।

'क्यों पसन्द नहीं है तो और दिखलाऊ, कम में दिखाऊ ?'

'नहीं कम क्यों ? और जगह भी देख लें फिर आएंगे अभी ।' कह तो दिया उसने पर यह वाक्य उसे चोट कर गया था, 'कम में दिखाऊ ?' चेहरे पर जैसे एक साथ बहुत सी चीटियों ने काटा हो । उसने पलट कर नहीं देखा था ।

'ऐसा करें, पहले एक-एक ग्लास लस्सी ले लें यहीं । फिर कहीं और चलें, सोचें ।'

'चलिए । पर इसमें सोचना क्या है, लेनी तो है ही, और जब चीज ठीक हो तो चार जगह चक्कर क्यों काटा जाए, खिसियाए से फिर

वहीं जाम्रो, लाइए जी, दे दीजिए वही।'

'तुम बहुत जल्दी उतावली हो जाती हो जरा ठहरो तो, तुम्हें पता नहीं इनमें जगह जगह बहुत फर्क मिलेगा।'

उस दिन चुपचाप मवने लस्सी पी उसके सर में दर्द शुरू हो गया था। भ्रौर दुकाने भी बन्द होने लगी थी। अत वह वापस लौट आया था। रास्ते भर सोचता भ्राया था, कल ये जीजा जी चले जाए गे तब इत्मीनान से रमा को समझाएगा— क्या जरूरत है इतनी महगी साड़िया लेने की। अभी बच्चा के इतने महगे कपडे सिलवाए है। हाथो की चूडिया भ्रौर गले का हार बनवा लिया है। ठीक है दोनो कमाते हैं, पर दोनों के वेतन की कुल राशि भ्राती कितनी है, छ सौ रुपल्ली जिसमे नब्बे तो मकान किराया ही निकल जाता है।

पर यह सब वह समझा कहा पाया था ? दो दिन आफिस मे बेतरह व्यस्त रहा। फिर आज तीसरे दिन शाम साढे सात बजे लौट पाया। रमा खीझी-सी बैठी थी, जाने मे सिर्फ तीन दिन रह गए थे।

'तैयार हो जाम्रो।'

'चाय नहीं लेंगे ?'

'वहीं ले लूगा कही, अब चलो फिर साढे भ्राठ बजे बाजार बन्द हो जाता है।, ताँगा किया, बाजार भ्राए बच्चो को फिर समझा बुझा कर किसी तरह घर छोडा था। कह आए थे तुम्हारे लिए चीजें ले भ्राए गे। रमा ने कहा, देखिए जी अब समय तो है नहीं, सीधे उसी दिन वाली शाप पर चलते है। वह भ्रनुगत हुम्रा था।

'भ्राइए भैन जी।' उसे लगा कि सेल्समेन उसे ढिठाई से देख रहा है, जैसे वह हार गया हो।

'वो ही, उसी दिन वाली साड़िया दिखाइए।'

'वो तो निकल गई।'

'निकल गई'।' रमा के चेहरे पर एक साथ खीझ, ईर्ष्या और गुस्सा फूट पड़ा था, जैसे रो पड़ेगी, चलिए फिर और नहीं चाहिए।

'मैं जी और दिखाता हूं, ठहरिए तो।' उसने दो पीस वहीं निकाले थे, बिल्कुल वही, 'ये हैं तो।' उसने गम्भीर होकर कहा था।

'ये तो इमीटेशन है।'

'इमीटेशन है, कितने के हैं ?'

'ये पचपन का है, और ये सिल्क का अस्सी का है।'

'अस्सी वाले को हाथ में लेकर उसने कहा था, इसे ले लो न।'

'नहीं लेना मुझे।'

वह सप्रयास चेहरे पर मुस्कराहट लाया था, 'बांध दो इसे, हां इसका पेटीकोट ब्लाउज ?'

'इसका ब्लाउज अलग से आएगा साब।'

'कुल कितने ?'

'एक सौ पन्द्रह साब।'

'ठीक है बांध दो।'

'नहीं चाहिए।' जैसे वह चीख पड़ी थी।

'क्यों ?'

'क्यों ? आपने कुछ कभी देखा हो परिवार में, तब तो आप समझेंगे, खादी के कपड़े, रोज धोना, रोज पहनना, जिन्दगी भर पिताजी दुकान पर बैठ कर दवाइयां बेचते रहे– न कोई सोसाइटी, न उठना,

न बैठना, जिन्दगी गुजार दी, नही चाहिए मुझे कुछ नही चाहिए, और मुझे बेचकर बैंक मे जमा करो रुपए।'

उसने किसी तरह जब्त किया था, 'अच्छा यह बताओ शादी तुम्हारी है, या तुम्हारी बहन की लडकी की। लोग तुम्ह ही दुल्हन समझने लगे, ऐसी तैयारी कर रही हो।'

'आपको क्या पता शादी मे क्या पहनते है, कभी भले घर की शादिया की हो, देखी हो ता जाने, मैं तो कहा फस गई आके।' उसने रुमाल निकाल कर आखे पोछी थी।

अब उसे सहन नही हुआ था। चलो तो।'

'ठहरिए तो, चीजे तो और एक से एक बेजोड है। आप मन क्यों छोटा करती है, ये देखिए।' बच्चो की तरह सेल्समैन उसे बहला रहा था।

'यह इसके साथ का पेटीकोट निकाल दीजिए।'

उसे न पूछा गया, न देखा गया, उसने सिगरेट निकाल कर सुलगाई, सिगरेट ऐसे अवसरो पर उसकी रक्षा करती है। उसे लगता है वह अपने मे व्यस्त कर लेती है। उसने देखा तीन सौ पचास रुपये रमा ने दे दिए। जरी के काम की साडी थी, पैकेट बध कर आ गया।

रास्ते भर कोई नही बोला। घर आकर चुपचाप लेट रहा, कपडे नही उतारे, सारा बदन जल रहा था। रमा को होश नही रहता कब कहा क्या बोलना है, क्या करना है। ग्रेजुएट होने की दुहाई देगी, जबरदस्ती इगलिश बोलेगी, फूहड।

'कपडे नही बदलेंगे क्या, यही जाएगे क्या ?'

उसने सिर्फ उसे देखा, उसकी अपनी आखें जल रही थी। क्या सोचता होगा सेल्समैन। इन्हे कुछ होश नही रहता, जो जबान पर आए

मचती है। चुपचाप सिगरेट सुलगाई और धुआं देखता रहा।

'चाय!' चाय का कप और तली हुई नमकीन की प्लेट लिए खड़ी है रमा। वह खुद को रोक नहीं पाता। एक झटके में ही चाय का कप प्लेट, नमकीन चिप्स चूर-चूर होकर बिखर गए हैं।

'क्या बात हुई?' रमा के मुंह से धीरे से निकला है। बच्चे चुपचाप करीने से पालथी मार कर बैठ गए हैं।

'क्या हुआ? आप से यू डिवोर्स मी, हम साथ नहीं रह सकते, तुम बड़े खानदान की हो और मेरे दादा भिखारी थे, इडियट। तुम अपना महल सजाओ, डेकोरेट योर स्वीट होम, ब्लडी गोइंग।'

'सुनिए तो।'

'क्या सुनिए, हटो वरना उठ जायगा हाथ।'

वह साइकिल लेकर निकल आया दूसरी सिगरेट सुलगाई, अधेरा थोड़ा घना हो चला है, अब किधर जाए। तीन बच्चे हो गए हैं, आठ साल शादी को हो गए। कितनी तरह से समझाया है। पड़ौस में मिस्टर अग्रवाल के लड़के का सूट आएगा, वह उससे अच्छा सूट लाएगी। कोई हुण्डलूम की साड़ी लाएगा वह टैरी काटन की साड़ी लाएगी। उसकी कॉलीग सीनियर टीचर मिसेज श्रीवास्तव की बच्ची बीमार हुई वे फल लाईं, शाम को खुद ही सेब ले आई। कुछ कहने से पहले ही कहने लगी, मैं पूछती हूं जब बच्चे विटामिन्स के अभाव में बीमार हो जाए तभी उन्हें फल दिए जाएं।

बड़ा बाजार आ गया है। सामने ब्राइट ईवनिंग' होटल है। वह जाकर बैठा रहता है। बेयरा मीनू रख गया है। वह माथे से बालों पर हाथ फिराता है। फिर सोचने लगता है ये रमा किसके साथ खड़े होने के लिए चेहरे पर चेहरा चढ़ाना चाहती है, सामर्थ्यहीन पैरों पर बैसाखियां बांध कर किस ऊंचाई तक जाना चाहती है। बैसाखियां कभी

पैर बनी हैं ?

वह स्वयं को साध नहीं पा रहा है और गुस्सा अब धीरे धीरे दुख का स्थान ले रहा है। बेयरा फिर आकर खड़ा हो गया है। क्या मगाए, क्या न मगाए। 'एश ट्रे।'

'एश ट्रे रख कर बेयरा फिर खड़ा हो गया है।'

'चाय ?'

'ले आओ।'

तेरह वर्ष की सर्विस हो गई, बस वही जो कट जाता है वेतन मे से फण्ड, वही सुरक्षित है, बाकी सब पता ही नही चलता। रमा ने तो कर्जा और कर लिया है ऊपर से, कहती है आप से क्या मैं चुका दूगी, मरी पे से आपका कोई वास्ता नही आपकी पे, आपकी गृहस्थी। मिसेज उपाध्याय के यहा चन्दन सोप देख आई थी तब से बच्चे भी पियर्स से नहाते है।

चाय को कहे देर हो गई है। बेयरा व्यस्त सा सर्व करता फिर रहा है। वह सिगरेट निकाल कर सुलगा लेता है। सामने कार्नर के सोफे पर पाच छ व्यक्ति बैठे है। पटेटो चिप्स के बाद अब क्रीम काफी का आर्डर दे रहे है। इनमे से कुछ की शक्ल पहचानी सी है– हा वो जो कोने मे बैठे है, कोई आफिस म है। कहा स लाते है ये सब इतना पैसा क्रीम– काफी और चिप्स पर खर्चने को। धुले सफेद कपडे पहने सब ठहाके लगा रहे हैं।

'चाय सर!'

'हा रख दो।'

'नमकीन ...!'

'नही।'

सामने सेन्टर टेबल पर कोई स्थानीय समाचार पत्र पड़ा है। वह उसे बेयरा से उठवा लेता है। बाहर सड़क पर कोई जुलूस जा रहा है, खिड़की में से देखता रहता है, जुलूस खासा लम्बा है। आगे बैण्ड पर कोई फिल्मी धुन बज रही है और पीछे-पीछे एक ग्रुप झूम कर नाचता चल रहा है। कोई कीर्तन मण्डली है, पीछे कुछ झाकियां हैं, उन पर कुछ कम उमर के लड़कों को सजा-धजा कर मूर्तिवत् बिठा रखा है, रोशनियां जग मग कर रही हैं।

उसे अजीब सा लगता है। एक ओर आदमी साधारण स्तर को मेन्टेन करने में टूट रहा है। दूसरी ओर इन प्रदर्शनों पर व्यय हो रहा है। कैसा है अपना देश, आदमी, सेल्फ सेन्टर्ड। अपना स्वार्थ, अपना सुख, अपना स्तर, इसके अतिरिक्त कुछ देख नहीं पाता है। ये किस पेय का नशा है कि आदमी होने न होने की पहचान नहीं पा रहा है।

वह चाय बना कर धीरे धीरे सिप करता है। गोद में पड़े अखबार की हैड लाइन्स पढ़ता है, किसी नेता का भाषण है, लिखा है, हमें आत्मनिर्भर होना चाहिए, विदेशी ऋण से मुक्त होना है . । समूचे देश में जनता की इकाई तक हर व्यक्ति ऋण में डूबा हुआ उसे चाय फीकी लगने लगती है। उठ कर काउन्टर पर पैसे देकर बाहर आ जाता है।

धीरे धीरे घर आ गया है। साइकिल खड़ी करके अन्दर आंगन में खाट डालकर लेट रहता है। रमा चुपचाप सब्जी काट रही है, बच्चे सो गए हैं। अंगीठी का धुआं आंगन में घुमड़ कर ऊपर उठ रहा है। कैसे समझाए वह रमा को कि हम जहां जिस परिस्थिति, वातावरण में जी रहे हैं, वह सब कितना कृत्रिम है। सम्बंध, सम्बन्धों के दिखावे सब। तब आदमी किसके लिए ये ताजिए सजा रहा है। मृत्यु हो गई है, और हर व्यक्ति किसी तन्त्र से चालित सा, किसी अज्ञात से निर्देशित सा अवश सा सब आडम्बर सजाता जा रहा है। वह नहीं बोल पा रहा है जो वह कहना चाह रहा है। 'खाना बन गया है, ले आऊं ।' रमा

खड़ी है।

'क्या सब्जी बनाई है?'

'भिण्डी।'

वह किसी जगह से फिर एकदम तप गया है, उसे ठीक से याद है, भिण्डी आज बाजार में तीसरी बार आई है और भाव है ढाई रुपये किलो पर क्योंकि कल मिसेज शुक्ला लाई थी, इसीलिए वह भी लाई है।

'ले आऊं खाना?'

'अभी नहीं।' रमा खड़ी है चुपचाप हाथों की उंगलियों को एक दूसरे में उलझा रही है।

वह चुप हारा, कोहनियों का तकिया बनाए लेटा रहता है, आसमान में उसके घर का धुंआ धीरे-धीरे भर रहा है।

'तुमको पता है तुम जो मुझ से कह रही थी उससे क्या प्रतिध्वनित होता है, और तुम जो कर रही हो वह तुम्हें कहां ले जाएगा?'

'क्या कर रही हूं मैं?'

'तुम जो कर रही हो, वह तुम्हें वेश्यावृत्ति की ओर अग्रसर कर रहा है- शालीनता से अलग पैसे की ओर, और मैं आज यही निश्चय ले रहा हूं कि मैं घर छोड़कर जा रहा हू क्योंकि तुम्हें पति नहीं चाहिए, एक नकली स्तर चाहिए, नकली लोगों के बीच इतराने को लगड़े पैरों में बैसाखियां चाहिए। और मैं, तुम्हारे शब्दों में एक निकृष्ट व्यक्ति हूं। तुम्हारा सजना, सवरना मुझ में हीनता भरता है।'

'मेरा क्या होगा फिर?'

'शादी में जाना।'

उसने पेपर लेकर कुछ लिखा है, रमा खड़ी देखती रही है।

'यह लो– यह पत्र, इसी आशय का है कि मेरे फण्ड का सारा पैसा श्रीमती रमा को दे दिया जाए मैं स्वेच्छा से सब छोड़ कर जा रहा हूं।

'आप ऐसा समझते हैं मुझे।' रमा फूट कर रो पड़ी है।

'तुमने ही तो यही समझाया है।'

'अच्छा तो मुझे कहो मैं क्या करूं मैं छोटी नहीं हूं, मुझे मार, डाट कर नही समझा सकते? मुझसे बड़प्पन क्यों नहीं बरतते?'

देर तक रमा चारपाई के पास खड़ी रहती है और वह सितारों से छनते अंधेरे को देखता रहा।

'अच्छा खाना ले आओ।'

खाना लग कर आ गया है।

'बैठो साथ्रो साथ।' भिण्डी और पराठे सोंधी गन्ध दे रहे हैं। रमा फिर रो पड़ी है।

'देखो रमा। मेरा एक ही कहना है। जीवन के प्रति यही मान्यता है, अपने स्तर को उठाने को प्रयत्नरत रहे सामर्थ्य भर, पर स्तर का प्रदर्शन हमारी सामर्थ्य को प्रदर्शित न करे। जो हम नहीं हैं, वह हम नहीं हैं, हम हैं जो, वही हम स्वीकार करे।'

'खाना ठडा हो रहा है।'

'हां खा रहा हूं, पर मेरी बात समझ मे बैठी है?' वह हरी मिर्च काटता है और खाता है।

ऊपर आकाश मे बहुत से तारे खिल रहे हैं।

□ 'समाज कल्याण',

क्षितिज हीन.

सुशील उठ कर चला गया तो बहुत देर तक तो वह यों ही, जड़, मुढ़े पर बैठा रहा किसी की ओर देखने का साहस नहीं हुआ, सुशील ने इसी वर्ष एम० ए० किया था और लेक्चरर हो गया था, धुली झक सफेद बुशशर्ट, दाहिने हाथ की अ गुली में झिलमिलाती अ गूठी, लाइट ग्रे पैंट और ब्राउन चप्पलें, सबने झट से उसके लिये बिस्केट मंगवाए, एकमत होकर केतली फिर गोलमेज पर आयी, सब उसकी प्रशंसा करते रहे।

'आज ही जा रहा था, सोचा चाचाजी से मिलता जाऊं, फिर तो अब दशहरे पर आऊंगा।'

'क्यों नहीं, क्यों नहीं, अच्छा किया बेटे, अब भी आओ तो जरूर आना, लायक बेटा तुम जैसा ईश्वर सबको दे।'

चुप बैठा यह सुनता रहा, बाऊजी, मम्मा और ये सनीता सुईन, छुटकन, सबके सब, एक स्वर से उसको प्रताड़ना में लगे थे जैसे वह पैसे मिलने पर सीधी इनके पास ही भेज देगा, पीठ पर घुमीने का कहना वह स्पष्ट महसूस कर रहा था, सुशील को लायक कह कर साफ-साफ उसे नालायक कहा जा रहा था– वैसे यह किसी से भी घर में छुपा तो नहीं था कि सुशील का नौकरी मिलने में उसका लायकपन कहां तक शामिल है।

'और क्या बात है अनिल ! बहुत चुपचाप रहने लगे हो, आये नहीं घर की तरफ ?'

'यो ही बस जा नहीं पाया, आज जाता सो तुम आ गए', , कहकर बाऊजी को देखा है उसने, उनकी दृष्टि में उसके लिये उपेक्षा उभर आई है।

'और ? अच्छा, नमस्ते।'

और कोई अवसर होता तो बाऊजी और मां के लम्बे चौड़े उपदेश होते, कड़वी तीखी बातें होती, पर अब दोनों ने चुप्पी सी ही ले ली है। कहीं जाए, कहीं आए पूछते नहीं हैं, वह खुद भी रात नौ दस बजे तक ही लौट पाता है।

सभी लोग सुशील के उठते ही उठ गए, थोड़ी देर बाद उसने भी अपने चारों ओर लगे शीशे को तोड़ा, बाहर आया थोड़ी देर खड़ा रहा, चबूतरे पर लगे गुलमोहर के लाल फूलों को कौवे तोड़ तोड़ कर नोच कर फेंक रहे है। बचपन से ही यह उससे सहा नहीं गया कि उसकी प्रिय वस्तुओं को कोई बिगाड़े, वह देर तक कौओं को छोटी–छोटी ककड़ियों से उड़ाता रहता, तब बाऊजी प्यार से कहा करते थे, अरे रहने दे थक जायगा हाथ में झटका–वटका आ जायगा। पर तब वह छोटा था। टप–टप, कलियां और फूल कौवे तोड़ तोड़ कर गिरा रहे हैं, खा रहे है पर देखता रहा, फिर आगे गली में बढ़ आया। धूप तीखी

है। सडक पर आकर सोचता रहा कहा जाये अब, पहले जौहरी साहब के यहा चला जाता था। दोनो पति-पत्नी कितनी आत्मीयता से मिलते थे पर इसी वर्ष मे ही यह अन्तर उसने देख लिया था अब वे दोनो उसके पहुँचने पर चुप हो जाते, किसी काम मे व्यस्त, उसके यह कहने की प्रतीक्षा करते कि, 'अच्छा चलता हू और अब न रुकने का आग्रह होता है न यह पूछने की औपचारिकता कि कही से कोई इन्टरव्यू वगैरह नही आया क्या ? या आना फिर, न चाय के साथ अब कुछ होता है बल्कि अब तो कभी-कभी आधा कप चाय मिलती है, बहुत ना भी नही कर पाता पी लेता है। सडक पर आकर दो घडी खडा रहा, जौहरी साहब वाली गली को देखा और कालेज की ओर मुड लिया।

रास्ते मे प्रेस के बाहर आज के ताजा समाचार पत्र के पृष्ठ चिपके है, वह गौर से आवश्यकताओ के कालम मे अपनी 'क्वलिफिकेशन्स' के अनुसार कोई रिक्त स्थान ढूढता रहता है, हिन्दी, अग्रेजी दोनो पत्रो को दो-दो बार पढा है। सबसे नीचे एक कोने पर एक वेकेन्सी है, मेडीकल सेल्स एजेन्ट की। दो सौ रुपये प्रतिमाह। वह पास खडे एक सज्जन से पेन मागकर नीचे से सिगरेट का एक खाली पडा पैकेट उठाकर उस पर लिख लेता है। अक्षरो के कागज पर उतरते ही उसे बाबूजी का चेहरा दिखाई पडने लगता है, एक बार पहले भी ऐसे किसी स्थान के लिये आवेदन करना था पोस्टल आर्डर भरना था, माग लिया था तो बोले थे, कौन ले लेगा इसे, एम एस सी चाहिये उसमे, आदमी स्मार्ट हो, बिजनेस मे ऐठ नही चलती, और फिर क्या एक्सपेरिएन्स है, बी आर सिम्पली हाईस्कूल आफ आवर टाइम्स, बट वी केन टीच मैनर्स एण्ड लेग्वेज ईवीन टू आई. ए एस. आफिसर्स नो, नो आई कान्ट वेस्ट मनी अपआॅन हिम, हैव आय एनी नोट प्रिंटिंग मशीन इन माई हाउस... ?' मुट्ठी मे कागज पसीज आया है तो उसने सहेज कर जेब मे रख लिया है। 'हमारी सेवाये आपको समर्पित है, अपनी क्वालिफिकेशन्स हमे लिखवाइये हम आपको उपयुक्त नौकरी दिलवाने मे सहयोग . !' एक जगह और एक फटा नुचा पोस्टर और लगा है,' राष्ट्रभाषा हमारे देश

की एकात्मकता की शक्ति है....।' एम्पलायमेन्ट एक्सचेंज है। यह स
पहली बार उसे कितने अच्छे लगे थे, अब इन सबको देखकर उसे घि
हो जाती है।

और आगे, फौज में भर्ती होने का आव्हान करता एक विशाल
बोर्ड टगा है। तीन बार एप्पीयर हुआ था पर कही न कही कुछ हमेश
कम रह ही गया।

सीधा कानेज की सडक पर मुड लेता है। कल बहुत मिन्नत
करके भाभी से दो रुपये लिये थे, कब तक चलायेगा इन्हें। बडके भैया
होते तो एक भी न मिलता। अब इन्हे खर्च नही करेगा जेब मे रहने से
हिम्मत रहती है। कालेज मे कोई परिचित चेहरे नहीं है इकहत्तर मे
हिन्दी एम. ए किया था। गर्मी भर सर्विस के लिये दौडता रहा था पर
हाथ यही अनुभव आया था, इन्टरव्यू, 'वैकेन्सीज की विज्ञप्ति' अधिकाशत.
औपचारिकता ही होती है सबके अपने अपने ठिये और लोग होते है।
तब बाबूजी बेहद बिगडे थे, कितना कहा था इससे हिन्दी मे क्या रखा
है, 'इकोनोमिक्स', या राजनीति ले ले, ठीक रहेगा, पर तब माना,
और उनकी हठपूर्ति के लिये एम. ए इकोनोमिक्स में भी किया। इन
चार वर्षों की पी. जी. एजूकेशन मे कालेज का बाह्य और अतरग परिचय
हुआ। बहुत यत्न करने पर भी अठावन परसेन्ट पर गाडी रुक गई–
प्रथम श्रेणी नही बन सकी और उसके साथ प्रिवियस मे जिनके बावन
प्रतिशत मार्क्स थे, सावली–सावली सी मिसेज मित्तल, वे ले गई पोजीशन.
डिवीजन।

साइकिल स्टेन्ड पर खडा रहा। कॉलेज के बाहर पत्थर पर
खुदा हुआ दूर से दिखाई पड रहा है। शिक्षा पशु को मानव बनाती है।
अग्रेजी मे एक जगह लिखा है, 'नोक दाय सेल्फ'।

सामने से प्रोफेसर सक्सेना और गुप्ता आ रहे हैं। उसके मुह
मे थूक भर आता है। दोनो ने कोठिया बनवाली है। 'की नोट्स'
टेक्स्टबुक्स लिखते हैं, रिश्वत देते हैं और कोर्स मे लगवाते हैं। किसी

भी छात्र को सभी पहचानते थे ये, जब या तो प्रेस से प्रूफ मगवान हो या प्रूफ करेक्ट कराने हो, या बैंक भेजना हो वह पीठ कर लेता है। इधर सामने से प्रोफेसर श्रीवास्तव आ रहे है। सावले सावले मोटा फ्रेम का चश्मा चढाय साइ ३ म ह पर वैज्ञानिक कभी नही लगे है। हमेशा दार्शनिक ही लगते रह है। सारे कालेज के छात्रो की अध श्रद्धा रही है इन पर। परिचय हो या न हो विद्यालय का कोइ भी छात्र उनका नितान्त अपना है पूरे स्टाफ म अपनी तरह क अकेले ह। उसने हाथ जोडकर नमस्ते की है। हेलो क्या कर रहे हो आजकल।

जी, बेकार हू।

इट्स वेरी पेनफुल बट डोन्ट वरी दिस इज योर लास्ट एक्जामिनेशन, ऐसा करो तुम कल पाच बजे घर आ जाना।

जी अच्छा'

यस लेट मी सी '

वे चले गये हैं तो वह बरामदा म घूमता बाहर निकल आया ह बाहर पान की दुकान पर भीड है।

रमन खड़ा खडा है साथ म और फ्रेन्ड्स भी हैं रमन न उस कनखिया से देखा है और पीठ करली है। वह और रमन दोनो इस कॉलिज म बेहद साथ घूमे हैं। खूब गाली गलौज मान मनोवल हुआ है पर अब वह पीठ देने लगा है। वह दो क्षण खडा रहा है। इस पुरानी दुकान के सामने नई खुली पान की दुकान से तीन सिगरेट लेता है दो वही सुलगाता है और पहले की तरह पीछे से रमन क क धा पर हाथ मारता है अबे मेरा चेहरा बदल गया है क्या ?

हेलो यार ! कार्न्ड अब महीने भर से कहा था ?

अच्छा ले सिगरेट पी ।

अच्छा क्या जाब ले लिया ?

'जॉन ? अबे, सिगरेट खरीदते हैं और यारों को आवाज देकर पिलाते हैं।'

'साले ? अकल घर में नहीं घुसने देंगे, तो क्या, कहा है अब ?'

'अबे, यहीं नौकरी मब्जी भाजी है क्या कि आधा किलो, किलो लेली ।' उसने देखा है कि रमन के चेहरे की चमक सहसा बुझ गई है सिर्फ हंसी रह गई है।

'और' ?

'और क्या घर पर बोर हो रहा था सो यहा आ गया'

पीरियड बजा है और फिर स्टेशन जैसा शोर हुआ है।

'अच्छा तो मिलना यार फिर, अभी तो प्रो० घोष का पीरियड है एक सैकण्ड की भी माफी नहीं देंगे।'

वह फिर लम्बी फैली सड़क को खड़ा देखता रहता है, किसे बताये कि तब कॉलिज का चप्पा-चप्पा उसका था। सिगरट सडक पर डालकर जूते से मसलता है, निगाह उठाता है तो रश्मि दिखाई पडती है।

रश्मि ने फिर इस वर्ष एम ए इस बार पोलिटिक्स में जायन कर लिया है। वह थोडा चुप गया है, रश्मि ने अब तक कई बार उससे कहा है कि पापा और अधिक इन्तजार नहीं करेंगे, कई जगह से रिश्ते आ रहे है जहा लडके सब 'वैल एस्टेबिलिस्ड' है। हर बार ही जब यह सुनकर वह उदास हो गया है वह तो 'ए S S', कहकर बस उसके बालो मे उगलिया फिराती रही है, 'क्यो हो गये उदास', सुनो मैं सर्विस कर लूगी, पर तुम ये बच्चो की तरह रोनी शक्ल मत बनाया करो।' पर यह वर्ष की पहले की बातें हैं। अब रश्मि जब भी मिलती है, चुप अधिक रहती है, और न अब दुबारा मिलने की जगह और तारीखें निश्चित होती है। वह खडा-खडा उसे जाते देखता रहता है। आगे खडे ठेलेवाले पर से पच्चीस पैसे के चने ले लेता है और एक एक कर मुंह में फेंकता आग

बढता रहता है। आगे दाहिनी ओर बडे नीम के नीचे छोटी सी कैन्टिन म है, उसे लगता है प्यास लगी है। जाकर टीन की कुर्सी घसीट कर बठ जाता है, केन्टिन वाले ने नमस्ते दाग दी है और छोरे को पानी लेकर आने का आदेश दिया है। वह पैर फैलाकर चने चबाता रहता है। सामने की बेंच पर तीन, चार, लोग बैठे है और रेल सम्बन्धी हड़ताल के सदर्भ मे सरकार की नीति को कोस रहे है इतनी परेशानी और लाचारी अस्सी प्रतिशत तबके के पास, शायद किसी बडे अकाल के समय मे भी नही रही है। 'लडका पानी रखकर खडा हो गया है, तो उसने कैन्टीन वाले काका की ओर मुह करके कहा है, 'आज अ कल ! पानी ही बस।'

'आज बाबू ! चाय हमारी तरफ से, ि.फ पानी नही, पानी बहुत महगा है।'

'क्या महगा नही है ?' उन लोगो मे से बैठे एक व्यक्ति ने टोका है।

'ईमान, साहेब ! आदमी का औरत का ईमान आजकल कौडियो के मोल बिकता है।'

वह किसी जगह से उखड गया है, मिसेज मित्तल, उसकी कनास-फेलो याद हो आई है, कैसा आकर्षक मेकप करने का सेन्स था उसमे। अध्यक्ष को पूरी तरह जादू चढा, और वह सब उतरा उसके सर कि सडक, सडक चौराहो पर भटक रहा है। वह उठ खडा होता है।

'बैठो साहब चाय आ गई है , नही अ कल ! कल तुम्हारी चाय पीऊ गा, मेनी मेनी थैंक्स, फिर आऊ गा।'

'जनता मे एका हो गई, तो न महगाई रह न हडताल की जरूरत पडे, सरकार क्या घर घर घुसकर देखे, उस तक ये सेठ लोग सही स्थिति पहुँचने नही देते और आदमी है कि अपनो को ही खाये जा रहा है ..।'

ये लोग बातें करते उठ गये हैं। वह जेब मे पडे पैसा को बजाना

रहता है। एक टूरा पास से हड़तालियों की गुजरी है, उसे लगता है . यह किस हड़ताल पर है, न नौकरी, न पैसा, मां, बाप, भैया, भाभी, छोटे बड़े सब कुड़ते रहते हैं और अब तो वह सीलापन भी घर में से कम हो गया है। अब उसके होने न होने की स्थिति ही शून्य हुई जा रही है।

'अच्छा हो फँस आती हूं'

सहसा वह चौंका है, चलते चलते यहां आकर वह रुक गया है, रश्मि का दरवाजा है। छिलके फैंक कर पिंकी लौट गई है। पिंकी रश्मि से छोटी है, बहुत तेज, अच्छा हुआ उसने देखा नहीं, यहाँ कैसे आ गया वह।

शाम हो आई है गलियां पार करता वह बड़े चौराहे पर आ गया है। लोहे की टोपी लगाये पुलिस वाले तैनात खड़े हैं। उसे भूख लग आई है, और कोई जानवर उसमें अन्दर जागने लगा है। सामने से एक छह सात लड़कियों का झुन्ड साड़ियां लहराता उसके पास से गुजरा है और पाउडर की सुगन्ध उसके पास तक बह आई है। उसकी मुठियां कसने लगी हैं किस देश, किस परिवार, किस सभ्यता, किस शिक्षा का प्रतिफल है यह? सहसा ही एक तेज हवा का झोंका आया है किनारे पर खड़े पीपल के पत्ते तालियां बजाने लगे हैं, और कुछ हरे पत्ते टूट कर धूल और गुबार के साथ घिसटते चले गये हैं। दो सम्भ्रान्त व्यक्ति पास से कहते गुजरे हैं, 'यह सब, अब तो कुछ भी अप्रत्याशित नहीं है, सारी बन्दिशें जब आदर्शों की टूट जाती है तो पाशविकता ही फलती फूलती है।' धूल फिर उड़ी है, और उसने रेत से बचने को आखें छोटी छोटी की हैं। जेब से मुड़ी तुड़ी सिगरेट निकाली है पास खड़े सिपाही की पीठ को माचिस मांगने के आशय से छुआ है, 'अरे! तुम, इन्दर-सिंह!' उसके मुहल्ले का ही रहने वाला है ये सिपाही। फुटपाथ पर कड़ाही में ठेले वाले ने पकोड़े डाले है, दोनों ने एक साथ देखा है, 'चलो इन्दरसिंह एक-एक कप चाय हो जाय।'

'चलो साब! शाम तक तो खड़े रहना है ही, सब नाटक हो

लिया है साब !, देखते जाओ।' आकर कुर्सी पर बैठ गये है एक बच्चा छोटा पकोडे का दोना लेकर सडक पार करने को हुआ है कि आसमान से दो कौवे उसके हाथ से दौना झपटकर तेजी से उड गये है। उसकी आखें सहसा गरम हो गई है अचानक उठा है तो इन्दरसिंह ने मुस्कराकर रोक लिया है, 'देखो बस।' कई लाउडस्पीकर लगे है, पुलिसवैन आकर रुकी है। वे दोनो कौवे इतराते हुये आसमान मे उड रहे है। वह पुलिस वैन को देखता है, और कौओ को घूरता है, लगता है उसे भी अब विचारपूर्वक कोई निर्णय लेना ही पडेगा।

☐ 'नयी प्रतीक'

सुबह होने तक

मानिकपुर नाम का यह छोटा सा स्टेशन है, यों स्टेशन का नाम तो मानिकपुर है, लेकिन जिस बस्ती के करीब पड़ता है उसे सहपऊ कहते हैं। थाना है छोटा सा। यहाँ से शेर मजाहर है। यहीं से आगे चार कोस में लगभग, एक तहसील है छोटी सी अपाहरगढ़, देखकर लगता है जैसे किसी प्रचंड योद्धा ने भू मार कर रखा हो। कस्बे के किनारे एक नाला है, बस्ती बड़ी पुरानी है, लेकिन लोग कुछ नये शौक करने लगे हैं। यहाँ का कुछ का रेलवे स्टेशन नहीं है, इक्कों का अड्डा है। शोर इतना कि आपको अपनी बात नहीं सुनाई पड़ेगी। कुछ प्राइवेट लॉरी वाले हैं जो न जाने किन-किन स्टेशनों के नाम दोहराते रहते हैं। मथुरा के अन्तर्गत यह तहसील ब्रजभूमि का छोर कहलाती है। ब्रजभूमि यहीं समाप्त होती है, फिर भी किसी इक्के पर रुपहली गोट की पीली

[उमह

ओढनी ओढे छाती तक घू घट सरकाये कोई नवेली गाती दिखाई पडती है, 'राजाजी तुम तो वोहत मलूक इतने वडे तो क्यारे चो रहजी ईऽऽई।' इक्के मे बैठे हुये लोग उसे सुनते जाते है। चोरी चोरी उसकी शक्ल देखने की कोशिश करते है और इक्के वाला भी निस्सकोच घोडी को वहन, मा, बेटी, भाजी से अपने नैतिक रिश्ते जोडता चलता है, तिके, तिके, और इक्को की कतार सडको पर दिखाई पडती है।

सावन के दिन हैं, वागो मे भूले पड जाते हैं व्रज की वहार इन्ही दिनो की तो होती है। इमली की मोटी मोटी डालो पर चार चार योवनाए वेग बढाती नजर आती हैं शरीर स्पर्श से कुछ सिहर उठती हैं फिर उल्लास बढता है तो भूला जैसे आपे से बाहर हो उठता है। चारो ओर योवन बिखरा है, दोपहरी यो ही भूलो पर बट जाती है। ऐसा और इतना सब कुछ है यहा, यही मेरा घर है, मेरा पुश्तैनी घर, लेकिन शायद जानता कोई नही, यहा मुझे। सारे का सारा बचपन वाहर बीता है। आज भी लगभग दस साल वाद आया हू। जो कभी साथ थे वे अब सभी वाह्र सर्विस पर हैं, और जो खेली थी वे अब गृहस्थिन बन गई हैं। घर के कुए पर अब पानी भरने वालो की भीड नही होती, कुछ नए लोग नजर आते है, जो अभी नए ही है। शायद तब ये बहुत छोटे रहे होगे, जब मैं यहा पर था। अब सब बडे कौतूहल से देखने हैं। कुछ अनजाने मे ही नमस्ते बाबूजी कह देते है। सर पर गगरी रखे कोई दुल्हन घू घट मे से दो अ गुलियो से झाकती है, शायद मुस्कराती होगी। हो सकता है मैं इसका स्वसुर लगता होऊ, फिर दूसरी की ओर वह किसी आशय से देखती है। मैं सोचता हू दोनो मुस्कराती होगी, मेरा स्लीपिंग गाउन यहा के पहनावे से अलग है न। मेरी सूरत अलग तरह की लग रही है शायद।

'वस व्याहुली अब लेजा याय, लेजू मैं लेजाऊगी'। वहु वे सर पर घडा रखवा कर रस्सी एक हाथ मे समेटती लगती हैं। अरे ये तो चाची है। मैंने नमस्ते किया तो देखकर, बडी पहचान कर, आशिष देने लगी है, 'खूब बडे हो, पढो लिखो, वटुआ सो बहू आवे, वव आये

सरला ?'

'कल आया था चाची।'

'घर पर सब अच्छी तरह हैं न ? हां..., तेरी अम्मा की तो बडी याद आवे, बडी भली थी।' गला भर आया चाची का....।

'जाने भी दो चाची, अब तुम्हीं सब तो मेरी मां हो, मिथलेश आई है क्या ?' मैंने बात का रुख मोड़ा तो बोली, 'नहीं लल्ला, पैर भारी है बापो, बरसात बीते बुलाऊं गी।'

'अच्छा चाची, यों ही पूछ बैठा था, देखा नहीं है न बहुत दिनों से, साथ बहुत खेलते थे हम लोग बचपन में, इसी से, खूब बडी होगी अब ता?'

'हां एक बालक है, छोरा, कोई तीन साल को।'

वे चली गईं मैं द्वार पर पीछे तख्त पर बैठ गया। आज सवेरे से ही बादल घिरे हुए थे। अबाबीलों की टोलियां आसमान में चक्कर काट रही थीं। कोई अबाबील नीचे जमीन तक लहर खा जाती तो बच्चे शोर करते धूल उडाते गाते निकल जाते, 'आंधी आयी मेहु आयो बडी बहू को जेठु आयो।'

सब कुछ कैसा वातावरण है, भरा-भरा है, तो भी फीका-फीका सा लगता है। कहीं दूर से चक्की चलने की आवाज आ रही है हुक . हुक .. कु . कु कु। जाने क्यों मुझे ये आवाज बहुत बुरी लगती है। सामने के बडे वाले चबूतरे पर दस-बारह इमली के दरख्त हैं, मोहल्ले की कुछ लड़कियां झूला डाले उन्हीं पर झूल रही हैं। मैं उन्हें ठीक से देख तो नहीं पा रहा हूं पर उनका सावन अच्छा लग रहा है। 'अरी बहन झूला तो डारो चम्पाबाग में जो... ई ई . ई ई .. ई .. ।' अपने में डूबता उतराता वहीं बैठा सुनता रहता हूं।

अन्दर से खाने का बुलावा आ गया। यहां मेरे बडे भाई रहते हैं। भाभी अन्दर चौके में है। चौके में ही खाने बैठ गया। बडी देर तक खाता रहा, फिर ध्यान आया कि भाभी सोचेंगी कि बहुत खाता है,

लेकिन पेट नही भरा था और एक रोटी खा लेने पर भी नही भरा, कुछ कमी तो खलती रही फिर ध्यान आने पर मन ही मन स्वय पर हसा पानी अभी पिया ही नही था। एक घू ट भी इसीलिए तृप्ति नही हो रही थी। पानी पिया, पीते ही डकार आ गई तो मैं हस पडा भाभी भी मुस्कराई, तो उनके दात चमक गये। मैंने कहा, फिर जरा भाभी, तो वे समझ गई फिर मुस्कराई, 'तुम्हारा लडकपन नही गया लाला।'

'भाभी को देखकर तो बूढा भी लडकपन देने लग जाय। फिर मेरी तो , अच्छा, सामने की हवेली मे कौन रहता है ?'

'वही लडकियो के स्कूल की अध्यापिका है प्रभा, अब तो हैड मास्टरनी हो गई है। मिल आओ न जायके तुम्हारी तो, सखी है।' भाभी मुस्कराई।

'अच्छा, क्या वही प्रभा जो तब मेरे जाते-जाते आई थी ?'

'हा हा वही, बडी याद रखते हो।' भाभी ने फिर कहा। मैं चलने लगा तो रोक कर बोली 'देखो एक और उनकी असिस्टेन्ट रहती हैं, उन्हे दिल के दौरे पडते हैं, बचके रहिएगा।'

'बडे रगीले मरीज पाल रखे हैं।' मुस्कराकर मैं चला आया, हवेली मे अन्दर आया, 'मुझे गगन राकेश आर्य कहते हैं, जिनके मकान मे आप रहती है न ! मेरे बडे भाई है वे '

'अच्छाजी मुझे भी परिचय देने की आवश्यकता पड गई क्या ? वे मुस्कराई, पहचान गई थी।

पीला रग, जिसे मैं गोरा नही कह सकता। शरीर दुर्बल था। लेकिन शायद बचपन से ऐसा ही रहा होगा देखने से ऐसा लगता था। बाल सवार रही थी मू गफली जैसी उ गलिया कभी-कभी उनमे उलझ जाती। बडी तेज नजर से मुझे देखा. मैं सकपका गया आख जैसे सौ-सौ के बल्ब, सीधी लेकिन अपनी बनावट की नाक थी। ओठ अच्छे थे पतले, जैसे नारगी की फाक, और उन पर हलकी-हलकी मूछें थी।

'आप क्या कर रहे हैं आजकल?'

'आप सबसे मिल रहा हूं।' वे हंस पड़ी वो तो देख ही रही हैं मेरा मतलब सर्विस से था।

'बेकार हूं।'

'और? शादी करली क्या?'

कहकर शीशे में अपनी आंखों का काजल ठीक किया।

'जी नहीं।'

'और एजूकेशन?'

'हां, दर्शन से एम. ए. कर लिया है।'

उन्होंने मेरे माथे पर बिखर आए बालों को देखा है, फिर ऊपर से नीचे तक मेरा मुआयना किया है तब थोड़ा मुस्कराई हैं। 'अच्छा फिलासफर्स कुछ सनकी होते हैं क्या? क्या ख्याल है आपका?' यहकर वे ओठ काटकर मुस्कराई है

'जो सनकी होते हैं, वे होने ही हैं, चाहे दार्शनिक हों, कवि हों, कोई क्यों न हो।'

अन्दर से एक और कोई महिला आई है, शायद इनकी असिस्टेन्ट यही होंगी। देखकर लगता है इन्हें दिल का मर्ज जरूर रहा होगा। बैठा हुआ चेहरा है आंखें शायद इसी से बड़ी-बड़ी लगती हैं। चौड़ी किनारे की साड़ी, खुले सूखे बाल—सब कुल मिलाकर दयनीय और सौम्य लगता है।

'नमस्ते।'

'नमस्ते।' मैं चौंक सा गया हूं। अन्दर ही अन्दर झेंपा भी हूं।

'निशा ये हमारे मकान मालिक हैं, छोटे मालिक।'

'नमस्ते ।'

'नमस्ते,' फिर एक बार नमस्ते हुई है। आकर एक तरफ किताब लेकर बैठ गई है फिर पढने लग गई है, लेकिन सावला रग गम्भीर लग रहा है।

'आपके मिस्टर क्या करते है, मैंने पूछा है।'

'जी नही, हम दोनों ने क्वांरी रहने को सोचा है।' बड़े तपाक से कहा है और उठ कर सारी के फोंल ठीक करने लग गई है, निशा ने एक बार किताब से दृष्टि हटाकर हतप्रभ हुए मेरे चेहरे को देखा है। मैं दोनो को देखता हूं। इमली पर पड़े झूले पर कोई छोहरी स्वर चढा रही है, 'अरी लाडों तुम तो बहुत मलूक, इतनी बडी तो क्वारी-यो रही जी, ई....ई ...ई।'

'निशा ! ये दार्शनिक हैं तेरी इनकी खूब बैठेगी, फिर मेरी ओर मुखातिब होकर बोली ये भी आधी पागल है मिस्टर गगन। जाने क्या-क्या सोचा करती है, वट आय बिलीव, टेक लाइफ एज इट कम्स।' प्रभाजी मुस्कराई है।

मैं बैठा कुछ सोचता रह गया हूं। निशा चाय लेआई हैं पता नही किस समय किताब छोड कर उठ गई थी। मैंने एक सिप लिया है प्रभा ने पूछा है, आपने विवाह क्यो नही किया अभी तक ?

मैंने सूनी आखो से उन्हे देखा है, मन मे कुछ चिढ सो भी हुई है, 'अभी तो मैं ही बोझ हूं खुद....।'

'क्यो ? अच्छा रहेगा ऐसी लड़की ढूंढिये न ! जो खुद सर्विस करती हो।'

'किसी को भगा लाऊं क्या, न मुझमे प्रभाजी ऐसी कोई विशेष बात ही आती है कि कोई मुझे चाहती, लड़की न, सर्विस वाली खुद

ही तलाशती आ जाती, कुछ मैंने भी अब यों ही रहने की सोचा है।' कहकर मुस्कराया हूं।

प्रभा ने मुझे पूरे गौर से देखा है। चौड़ी नाक, छोटी-छोटी आंखें, मोटे ओठ फिर ऊपर से नीचे तक देखा है, बोली, 'ऐसा क्या हुआ है, अभी आपकी उम्र ही क्या है।'

न जाने मुझे कैसा लगा, अकेला घर दो अनब्याही स्त्रियां एक युवक से बार-बार विवाह की चर्चा उठा लेती हैं, सोच कर झुरझुरी सी हो आई, तभी एक छोटा लड़का आ गया, पहाड़ी बालक है शायद प्रभाजी का नौकर है, 'साब सक्सेना साब बोलत हम अन्दर आने सकता।'

'मैंने कहा, अच्छा मैं चलता हूं कल मिलूंगा।'

'अच्छा आइयेगा जरूर, अभी तो ठहरेंगे कुछ रोज।'

'हां, आऊंगा।' मैं चला आया तो सक्सेना साब अन्दर गए। माथे तक फेल्ट कैप, काला चश्मा, फ्रेंच कट दाढ़ी, टाई, सिगार, छड़ी, कलाई पर घड़ी मुझे लगा बिलकुल जैसे किसी फिल्म का विलेन हो। घर आया तो भाभी ने पूछा, 'बड़ी देर तक गठती रही, कहो कैसी लगी।'

'अच्छी ही है जैसी होनी चाहिए, थी।'

'तो पसन्द है दोनो।' भाभी फिर हसी है।

'हां पसन्द तो है, मैं क्या करता भाभी वे ही जब तक बैठा रहा सिर्फ ब्याह की चर्चा करती रही, और वो दूसरी है न दुबली-दुबली सी सावली अच्छा छोड़ो बेचारी उनकी क्या खता है जैसा बना दिया है ईश्वर ने वैसी है।'

'चलो दिन कटने का तो अच्छा साधन हैं।' भाभी ने फिर चुटकी ली।

'कटेगी तो तुम्हारे साथ भाभी', वडे धीरे से कान के पास मुह ले जाकर मैंने कहा, इतने में भैया आ गये तो मैं झेंप गया।

आसमान मे घटा कुछ और घिर आई थी अत साझ से पहले अधेरा हो गया था। मैं छत पर चला गया, किसी के घर से सत्य-नारायण की कथा की शख ध्वनि आ रही है। आज पूर्णमासी है लेकिन चाद दिखेगा नहीं, बदली है न। धीरे धीरे हवा भीगी-भीगी चलने लगी और पानी रिमझने लगा। मैं नीचे आ गया। सारे कस्बे मे बिजली है पर हमारे यहा मिट्टी के तेल की लालटेन ही जलती है, सब वही पुराता-पन। भैया खाना खाकर हुक्का गुडगुडा रहे थे, मेरी खाट भी लग चुकी थी जाकर लेट रहा। अकेलापन, लालटेन के इर्द-गिर्द घिरे अधेरे मे मां याद हो आई, बिलकुल बादाम के स्वभाव वाली ऊपर से कठोर और चुप, अन्दर से स्नेहपूर्ण, कभी-कभी चिढ कर कहती, न जाने कैसे कटेगी मेरे बाद उसकी, कोई नखरे वाली मिलेगी तब होश ठिकाने आवेंगे, दुनिया भर के काम करवावे ऊपर से दीदा दिखावे, जे तो लल्ला हमई है सो तुम खूब फिराय लेउ। कभी भाभी से चिढ जाती तो कहती, अब तो इस गगन् की बहू आवेगी तभी भले ही आराम मिले। कहते-कहते गम्भीर हो जाती, इधर ही मा को फटी धोती मैं देखा था। सिर के तिल चावले बाल फटी धोती मे से झाक जाते, जब कभी चश्मा लगाकर सिलने बैठती तो मेरी नौकरी लग जाने की बात मन ही मन जोहती, फिर आसू भर लती, एकदम चुप हो जाती। बाऊजी की पेन्सन हो चुकी थी, मेरा भी खर्च कम न था तो भी मैं आश्वासन देता, 'नहीं' मा मेरी नौकरी ..।'

' . हा हा देख लिया, एक ने ही बहुत सुख दिया है, तेरी का कछु कम आवेगी, मैं कोई गवार ना हू, मुझसे किसी की गुलामी नहीं होती नौकरानी लगवा लो ?' अचानक प्रभा का चेहरा मेरे सामने आ गया, वे आखें जैसे सौ-सौ के बल्व, ओठो के ऊपर हलकी-हलकी मूछें पुरुष प्रधान स्त्री सी, कर्कश, फिर अधेरे मे से ही निशा का चेहरा याद हो आया सावला सा सौम्य सा वडा पीडित सा भी, मैंने आख खोल दी, फिर अकेले ही हसा भी। करवट बदली बाहर पानी काफी तेज बरस

रहा था। भाभी भैया के पैर दबा रही होगी उनकी हँसी की खनक सुनाई पडी है और भैया का हुक्का अभी बोल रहा है। बरसाती रात बारिश मे भीगती बढ रही है।

'लाला जाग रहे हो क्या ?' भाभी ने आवाज दी है। मैं चुप ही रहा प्रत्युत्तर नही दिया, वे अन्दर आई है लालटेन बुझा दी है, आज की बरसाती हवा ठडी थी अत मुझे चादर उढाकर सर के बाल सहला कर चली गई है, मैं आख बन्द किए पडा रहा, अंधेरे मे से पहले प्रभा फिर निशा और फिर हसती हुई भाभी याद हो आई है और नीद आ गई है।

सवेरे आख खुली तो दिन चढ आया था, लेकिन धूप नही निकली थी। आगन मे मटमैला पानी भरा था लगता था अभी बरस के बन्द हुआ है। बाहर आया तो देखा भाभी शायद नहा भी चुकी थी। मुस्करा-कर बोली— आज तो दावत है बहनजी के यहा।

'अच्छा।'

'अच्छा क्या, वे खुद चलकर कहने आई थी मैंने कहा जगा दू तो बोली नही सोने दीजिये रात न जाने कब तक जागे हो।

'हू।' मैं चुप-चुप मुस्कराता नहाने चला गया हू। निवृत होकर नहा धोकर लौटा तो दस बज चुके थे वही पहाडी नौकर बुलाने आया तो उसके साथ चला गया। एक मेज पर खाना लगा था दो थालियो मे। प्रभा ने सकेत किया मै बैठ गया, सामने की कुर्सी पर वे स्वय बैठ गई, कहा— शुरू कीजिये। मैने पूछा— निशा तो वे स्वय बोली, 'आप दोनो ...फिर मैं फुर्सत से बैठू गी।'

अचानक खाते–खाते मैं पूछ बैठा, 'आपके घर क्या होता है प्रभाजी ?' वे कहने लगी सर्राफ की दुकान है, गहनो की सोने चादी के ?

'अच्छा, मैं समझा तावे पीतल के।'

प्रभा ने अचार की खटाई चाटी, मुस्करा पडी, 'फिनासकी शुरू कर दी ?'

'तब तो आपको नौकरी नही करनी चाहिए थी।'

'क्यो, बुरा कर रही हूं क्या ?'

'नही ई .. ई, मुझे लगा करता है स्त्रियो को घर सभालना चाहिये। प्रभाजी सी ऽ ऽ, करने लगी कोई मिर्च खा गई थी पानी का एक घूट पिया बोली, 'क्यू' घर सभालना चाहिए, पुरुष ही नौकरी कर सकते हैं क्या ?'

मैं यह प्रसग छेडकर पछता रहा था, फिर अब जब शुरू कर ही दिया था तो वह सब कहूगा जो जानता हूं, अत थोडा सहज होकर कहा, 'वो बात नही है, लेकिन जितनी योग्यता से आप गृहस्थी चला सकती हैं .., फिर जीविकोपार्जन तो पुरुषो का ही कार्य है ... ।'

'यही तो भ्रम है आप सबका, घर की चहार दीवारी तोडकर यही तो दिखाना है हमे...., गगनजी आज की नारी सजग है, किसी की आश्रित नही है अब।'

'अच्छा। तब तो आपकी कमाई मे शायद आपके पतिदेव का कोई भाग नही रहेगा।' मुझे आनन्द आ रहा था।

'क्यू रहेगा ? इतने झटके से कहा कि मैं सहसा ही अपनी कुर्सी पर पीछे खिसक गया।' निशा चौके मे मुस्करा रही थी।

'और देने का प्रश्न ही नही कोई, मैंने ब्याह इसी चिढ से नही किया शादी करने आते हैं साहब कहते है दस हजार लेंगे, पच्चीस हजार लेंगे। लडकी का नाक नक्शा हेमामालिनी जैसा हो, अपनी तरफ नही देखते खुद क्या हैं।'

मुझे उनके आदेश पर हसी आ गई, 'तो फिर, अब क्या सोचा है?'

रहा था। भाभी भैया के पैर दवा रही होगी उनकी हसी की खनक सुनाई पडी है और भैया का हुक्का अभी बोल रहा है। बरसाती रात बारिश मे भीगती बढ रही है।

'लाला जाग रहे हो क्या ?' भाभी ने आवाज दी है। मैं चुप ही रहा प्रत्युत्तर नही दिया, वे अन्दर आई है लालटेन बुझा दी है, आज की बर्साती हवा ठडी थी अत मुझे चादर उढाकर सर के बाल सहला कर चली गई है मैं आख बन्द किए पडा रहा, अधेरे मे से पहले प्रभा फिर निशा और फिर हसती हुई भाभी याद हो आई है और नींद आ गई है।

सवेरे आख खुली तो दिन चढ आया था लेकिन धूप नही निकली थी। आगन मे मटमैला पानी भरा था लगता था अभी बरस के बन्द हुआ है। बाहर आया तो देखा भाभी शायद नहा भी चुकी थी। मुस्करा-कर बोली– आज तो दावत है बहनजी के यहा।

'अच्छा।'

'अच्छा क्या, वे खुद चलकर कहने आई थी मैंने कहा जगा दू तो बोली नही सोने दीजिये रात न जाने कब तक जागे हो।

'हू।' मैं चुप चुप मुस्कराता नहाने चला गया हू। निवृत होकर नहा धोकर लौटा तो दस बज चुके थे वही पहाडी नौकर बुलाने आया तो उसके साथ चला गया। एक मेज पर खाना लगा था दो थालियो म। प्रभा न सकेत किया मै बैठ गया, सामने की कुर्सी पर वे स्वय बैठ गई, कहा– शुरु कीजिये। मैंने पूछा– निशा तो वे स्वय बोली, 'आप दाना .. फिर मैं पुनंत स बैठ गी।'

अचानक खाते-खाते मैं पूछ बैठा, 'आपके घर क्या होता है प्रभाजी ?' वे कहने लगी सर्राफ की दुकान है, गहना की सोने चादी के ?

'अच्छा, मैं समझा ताय पीतल के।'

प्रभा ने अचार की खटाई चाटी, मुस्करा पडी, 'फिलासफी शुरू कर दी ?'

'तब तो आपको नौकरी नही करनी चाहिए थी।'

'क्यों, बुरा कर रही हू क्या ?'

'नही ई .. ई, मुझे लगा करता है स्त्रियो को घर सभालना चाहिये। प्रभाजी सी ऽ ऽ, करने लगी कोई मिर्च खा गई थी पानी का एक घूट पिया बोली, 'क्यू' घर सभालना चाहिए, पुरुष ही नौकरी कर सकते है क्या ?'

मैं यह प्रसग छेडकर पछता रहा था, फिर अब जब शुरू कर ही दिया था तो वह सब कहूगा जो जानता हू, अत थोडा सहज होकर कहा, 'वो बात नही है, लेकिन जितनी योग्यता से आप गृहस्थी चला सकती है .., फिर जीविकोपार्जन तो पुरुषो का ही कार्य है ... ।'

'यही तो भ्रम है आप सबका, घर की चहार दीवारी तोडकर यही तो दिखाना है हमे...., मगनजी आज की नारी सजग है, किसी की आश्रित नही है अब।'

'अच्छा। तब तो आपकी कमाई मे शायद आपके पतिदेव का कोई भाग नही रहेगा।' मुझे आनन्द आ रहा था।

'क्यू रहेगा ? इतने झटके से कहा कि मैं सहसा ही अपनी कुर्सी पर पीछे खिसक गया।' निशा चौके मे मुस्करा रही थी।

'और देने का प्रश्न ही नही कोई, मैंने ब्याह इसी चिढ से नही किया शादी करने आते है साहब कहते है दस हजार लेंगे, पच्चीस हजार लेंगे। लडकी का नाक नक्शा हेमामालिनी जैसा हो, अपनी तरफ नही देखते खुद क्या हैं।'

मुझे उनके आवेश पर हसी आ गई, 'तो फिर, अब क्या सोचा है?'

'मुझे चिढ़ सी हो गई है, पुरुष जाति से।' आवेश में वे और जल्दी खा रही थी।

'ऐसे क्या ये बीच की घृणा समाप्त हो पायेगी, और यों ही यदि बहस सचमुच ही चलने लग गई तो एक दिन मानव जाति ही समाप्त हो लेगी।'

'हो जाय जरा पुरुषों का पुरुषत्व भी तो देखें।'

मुझे फिर मन ही मन हसी आई है, शायद आवेश मे के ये भूल गई है कि वे जिससे बहस कर रही है वह भी तो एक पुरुष ही है। मैंने पुन शान्त स्वर मे कहा, यह सब ठीक है प्रभाजी दोषी पूरा समाज नही होता, दोष व्यक्ति विशेष मे होता है जो किसी परिस्थितिवश जन्म ले लेता है, आपने सोचा है, ऐसा करने से अपने ये, रगमच के से वास्तविक अभिनय के सबध ध्वस्त ग्रस्त हो जायेंगे। भैया की पवित्रता, बहन का स्नेह, मा की ममता, ये सब बरसाने और नन्दग्राम की प्रणय गाथाए फिर कभी जन्म नही लेगी। मैं प्रभा की शक्ल देख रहा था-तरस आ रहा था उसकी सूरत और बुद्धि दोनो पर, ये गर्ल्स स्कूल की हैड है, ढाई सौ तीन सौ लड़कियाँ प्रभा बनकर निकलेगी इनसे शिक्षा लेकर। जीवन विनाश की ओर ही तो अग्रसर होता है। भीतर से यही मेरा मन टीस उठा है।

प्रभा बोली, 'ये सब तो भावुकता की बातें हैं गगन भाई, कविता मत कीजिये जरा अलग मन से सोचिए, मैंने उन्हे भी देखा है जो आदर्श-वाद का ढोंग लेकर समाज सुधारने के बहाने स्वय की वासना शान्त करने का साधन ढूढते फिरते हैं।'

मुझे पसीना आ गया था। वे कहती गई, 'रोज बाजार मे देखती हूँ, वे सब पुरुष ही तो होते हैं सवेरे स्कूल जाने के समय दातून चबाते, प्रदा करते बाहर आकर पेपर लेकर बैठ जाते हैं, और अखबारो से दर्पणों दाकर दाप कर जो छींटे छिड़कते रहते हैं, सुने हैं आपने, उनका क्या होगा, बगला देश मे जो फौज ने स्त्रियों के साथ बलात्कार किया, वे

घया मनुष्य शरीर नही थे और वही क्यो, यहा मोहल्ले मे देखा है ओंकारनाथ की बहन की, सारी जायदाद भाई ने हड़प कर रक्खी है, उसे वह भीख भी नही मागने देता कैसे अपने आप मर जाय वह ? और, किसी निर्दोष को विवाह पर हो कह दिया जाता है इसका तो पहले से ही किसी से सम्बन्ध है तो, तब वह कहा जाय। ये सब सबध तो आडम्बर है, चाची, ताई, बहन, भाई, सम्बन्ध तो केवल एक होता है नारी और पुरुष का। कड़ुवा सा थूक उन्हान निगला है।

'यो तो, यह सत्य है कि सम्बन्ध जन्मजात नही है समाज की व्यवस्था के लिए है, तो भी इन तुच्छ छोटी छोटी हीन सी बातो को लेकर पुरुष जाति को दोष देना जचता नही है, यह कटु सत्य अवश्य है कि रास्ते चलते लोग व्यग्य कसते हैं लेकिन आप यह क्यो भूल जाती है कि सवेरे आपही क्षमा कीजिएगा मुझे, सिने एक्ट्रेस की तरह लिपिस्टिक लगाये उलझे-उलझे बाल माथे पर डाले स्कर्ट पहने पूरी बाहे खोले मुस्कराती हुई चलती है, किसे आमन्त्रित करने के लिए ये शारीरिक उभार की प्रदर्शनी यहा इस छोटे से कस्बे के वातावरण के विपरीत, किसके लुभाने के लिए, पुरुष यही तो कमजोरी है पुरुष की तब आप कहने लगती हैं वह गुण्डा है आवारा है, चरित्र हीन है और भी जो विशेषण याद रह।'

फिर नारी तो जननी होती है त्याग और आदर्श की मूर्ति, यह प्राकृतिक गुण है प्रभाजी, केवल मानवजाति म ही न्ही पशु पक्षियो मे नही देखा आपने ? जीवन के प्रवाह का सेतु है वह, नारी और पुरुष के सम्मिलित रूप का नाम ही जीवन है पृथक पृथक कोई अस्तित्व नही होगा। यह कहने से कि हम पूजो कोई नही पूजेगा, आपका, स्थान ऊचा है ऊचाई पर ही रहिये बराबरी पर जाने से आदर घट जाता है, यह ठीक है कि आप नए कानून मागती जायगी, अपने पति को तलाक दे देंगी, भैया के साथ साथ हिस्सेदार बन जायगी दूसरी शादी कर लेंगी, फिर ? फिर, क्या सुखी रह सकेंगी। स्मरण रहे प्रभाजी जब तक एक आवेश रहता है बुद्धि काम नही करती किंतु जब आत्मदर्शन होगा और

आपका अपना स्वरूप आपके सामने आयेगा तब स्वयं को क्षमा करने या दण्ड देने किसी से लाभ नहीं होगा, वह समय कितना दाहनमय होगा, कभी सोचा है आपने। नये पति पाथ चार दिन रहकर क्या पुराने, आपके इसी मस्तिष्क, इसी चेतना मे विस्तृत हो पाए गे। प्रभाजी यहा समाप्त कभी कोई वस्तु नहीं होती केवल नाम परिवर्तन होता रहता है। इस बढती हुई अव्यवस्था की आग मे आधुनिकता का घी डालने से क्या मिलेगा आपको, यो इस प्रकार किसे दण्डित कर रही हैं आप, नारी तो प्रेरणास्त्रोत है उसे पुरुष को उठाना चाहिये, पौरुष उसके पास है सभ्यता और सस्कृति की माग मे सिन्दूर रहे तो जयतु है नारी स्वयं का क्षेत्र छोडकर बाहर जाती है तो बर्बरता और पशुता पनपती है, वही हो रहा है, होगा, देखियेगा और इसके लिए दोषी !' मैंने देखा, प्रभा का चेहरा आभाहीन हो गया था, 'अरे ! मैं भी क्या आदमी हूं वार्तालाप के दौरान वातावरण का ध्यान ही नही रहता,' देखा निशा भीगी आखें लिये रसोई के बाहर खम्भे के सहारे खडी थी। हाथ आटे मे हो रहे थे, 'अरे ! आपको खाने को देर कर रहे हैं हम लोग, क्षमा कीजिएगा निशाजी, प्रभाजी, आप भी मैंने– मेरा कहा कुछ अनुचित या बुरा लगा होऊ।' अगुलियो मे लगा खाने का मसाला सूख गया था, हाथ धोकर उठा, प्रभाजी का पीला रग और पीला पड गया था।

मैंने कहा, 'मेरी बातो मे कुछ बुरा लगा हो तो ध्यान मत दीजियेगा, आवेश मे कहता ही चला गया, तर्क से कभी सत्य की अनुभूति नही होती, सत्य तो आत्मानुभूति की वस्तु है, अच्छा, नमस्ते।' सहसा याद हुआ तो निशा को बुलाया 'मैं बुरा लगा, तो अब नही आऊगा, पर बातचीत की दौड मे कह नही पाया था आपने खाना बहुत स्वादिष्ट बनाया था।' प्रभाजी निरुत्तर रही केवल निशा द्वार तक पहुँचाने आई थी आज उसका हलका बैंगनी सा सावला रग और सवेदनशील दृष्टि फिर बाध रही थी। हाथ जोड कर नमस्ते की, 'धन्यवाद।' बिना बुलाये भी आयेंगे तो जानूंगी खाना अच्छा लगा है।

'आऊगा, अवश्य।'

'अच्छा, देखूंगी।' घर आया तो, भाभी किसी के यहा मोहल्ले में सावन झूलने गई थी पडोस के घर मे झूले पर स्त्रिया 'चन्द्रावलि' गा रही थी–

'ठाढी जाऐ चन्द्रावली

रोय चले याके साहिबा

विहंसि चले राजा राजा वीर ... ।'

घर सूना था, जाकर कमरे मे खाट पर लेट गया, निशा का चेहरा याद हो आया, प्रभा शायद उसे एक सहायक, असिस्टेन्ट के रूप मे ही साथ रखती है कितनी चुप-चुप है अकेले पडे-पड़े न जाने कब सो गया। सांझ को लगभग साढे पांच बजे तक आख खुली तो घूमने चला गया। नाले के किनारे नए चेयरमैन ने एक पार्क बनवा दिया है छोटा-सा, देखा तो वही एक बेंच पर निशा भी बैठी थी, पता नही किन विचारो मे डूबी हुई, मैंने नमस्ते कहा तो चौक पडी, फिर उठ खडी हुई कहा आइये बैठिये। मैं सकोच सा करता बैठ गया। बडी देर तक हम दोनो मौन रहे।

'गगन बाबू! जीवन किस मोड पर जा रहा है? निशा ने मौन तोडा। मैं थोडी देर शान्त रहा।

'हममे, स्वय मे गरल पचा ने की सामर्थ्य होनी चाहिये निशाजी! स्वय को तो सुख कभी नही मिलता, वातावरण मे किसी प्रकार सुख और शान्ति भर सके, सौहार्द बना रहे तो...।' मैं चुप हो गया। आज, लगा मन कुछ भारी था निशा की आखे फिर कुछ गीली हो आई थी, 'आप क्या सोचते हैं हम लोग टीचर इसलिए बनी है कि नयी पीढी को कुछ देना या सुधारना चाहते है– ऐसा बिलकुल नही है....। भविष्य के लिये आपने क्या सोचा है?'

'जितना जहर पचा सकूंगा, पचाऊंगा।'

उसने फिर मेरी ओर देखा, 'क्यो व्यर्थ के पचडे में पड रहे हैं, कही छोटा सा घर वसाइये, पाप और पुण्य की मिलन रेखा का नाम ही जीवन है, जीवन मे यो कटुता भर कर क्या करियेगा ?'

'जब चारो ओर टूटना ही टूटना चल रहा हो तो उसमे बनाना कैसा ? हो सकता है, फिर या हिम्मत तोड देने से तो काम ·ही चलेगा न। आपने घर क्यो नही वसाया ?' निशा सीधी दृष्टि लिये भ·ी भरी सी बैठी थी। क्षितिज पर हल्की हल्की लाली बादलो मे से झाक रही थी।

घर तो मर्द बसाते है, और मैं किसी के घर मे सजने लायक भी तो नही थी।' चुप हो गई जैसे कही उलझ गई हो, हा बुरे काम को बुरी नही थी कितने लोगो ने मुझसे मीठी बातें की, वे सभी पुरुष थे गगन बाबू, उनके आश्वासन कितने मीठे थे, लेकिन कितने क्षणिक, मैं एक स्त्री हू गगनजी ! और आप ही कह रहे थे न सुबह कि नारी मा होती है किन्तु मुझे वह नयापन बदनामी दे गया वह जीवन मेरे लिये कमजोरी बनकर आया मुझे मिटाना पडा वह सब। बहुत सभव है मेरी स्पष्टवादिता को आप भी निलज्जता कह घृणा करे या आश्चर्य करें, लेकिन यह मैं नही बोल रही सुबह आपने बहुत ठडी बातें कही और पुरवा हवा अतीत को बहुत उघाडती है।'

'तो भविष्य क्या यो ही रहेगा !'

'अतीत कभी भूलता नही, और कोई नयापन अच्छा नही लगता, जीवन तो बहता ही रहता है भविष्य की वृथा प्रतीक्षा करना।'

'आपके कोई भाई नही है।'

'मैं किसी को भैया नहीं मानती गगन बाबू, मैंने हर दीपक के नीचे अधेरा देखा है, पाप के सबसे बडे पुज का नाम ही ईश्वर है, मानव की सबसे बडी विवशता का नाम। यो मेरे कोई सगा भाई है भी नहीं और जो देखे वे एक प्रापर्टी मे एक दूसरे के हिस्सेदार अधिक थे भाई

'जीवन का इतना कटु अनुभव होने पर भी आप दुखी होती हैं न जाने कब जिन्दगी की कौनसी बडी भविष्य में सुख से जुड जाय ।' इसके आगे मैं कुछ बोल नहीं सका। वह पढने लगी थी और रेतकी पर्त हल्की हल्की बारिश से ऊपर ऊपर भीग गई थी अन्दर वही सूखापन था। हम दोनो चुप-चुप वापस लौट लिये थ रास्ते भर हम दोनो नहीं बोले मार्ग मे एकाध मनचले व्यग कस देते जोडी अच्छी मिली है। सभव है और लोगो ने भी कुछ कहा हो लेकिन हमने सुना नहीं। विचारो मे डूबते उतराते घर आ गए तो सुना कि ओंकारनाथ की विधवा बहन आज मर गई है और वह शराब पिए पडा है। मोहल्ले वालो को साथ लेकर मैंने कुछ चन्दा किया, चन्दा देते समय लोगो के चहरे पर अपने इस धर्म कार्य मे दिए गए पैसो के लिए बडप्पन की गम्भीरता पुती रहती जैसे मेरी अपनी लाश के लिये वे सब दया कर रहे थे। चन्दा इकट्ठा करके मैं ओंकार की स्त्री को दे आया कहना ये लकडियो के पैसे है इनकी शराब न आ जाय। मोहल्ले की कुछ औरतें बैठी हुयी रोने का अभिनय कर रही थी। शव जैसे मुस्करा रहा था। आज जैसे वह सुखी था लौटकर मैं बाहर के कमरे मे सो गया। बरसात की भीगी रात बडी डरावनी हो रही थी, आज सिर मे बेहद दर्द था रात भर नीद नहीं आई, सवेरे चार बजे मैंने सुना कोई कहता जा रहा थ, कैसे बेसरम है मिट्टी खराब कर रहे हैं कल सांझ की मरी है और अभी तक पडी है। मैं आवेश मे उठा कुछ लोगो को जोर से बुलाया तो अपराधी से आख मलते उठ आये। बडी घृणा आई मन म, खैर अर्थी चली, लकडिया चिनवाई मैंने ही अपने हाथ से आग दी, लौटकर नहाया रात भर का जागा था, फिर सो गया।

सवेरा होते होते ज्वर चढ आया, दिन भर होश नहीं रहा, साझ को कुछ कुछ आख खुली सो लग रहा था जैसे आग पर लेटा हू, सर फटा जा रहा था मैंने बडे प्रयत्न से कहा– 'भाभी ई, ई ... ।'

'मै हू यहा, यह निशा का स्वर था। मैंने पूछा भाभी कहा है

तो उसने बताया मुझे यहा छोड गई हैं भाई साहब को खाना दे रही है। कैसी तबियत है अब।

रग रग मे बडा दर्द है। फिर मुझसे बोला नही गया। अधेरा काफी हो चला था, बाहर बडी तेज ठडी हवा चल रही थी मिट्टी के तेल की डिबरी की लौ काप-काप जाती। किसी ने द्वार खटखटाया, निशा है क्या ? यह स्वर सभवत प्रभाजी का था। मुझे कमरा बडा डरावना लग रहा था। मैंने कहा, निशा तुम्हे कोई बुला रहा है। निशा ने विवशता से मुझे देखा बोली वह दीजिये मैं यहा नही हूं आपको अकेला छोडकर नही जाऊगी। मैंने बडे प्रयत्न से कहा, वह यहा नही है, तो भी अचानक द्वार खुल गए। हवा के वेग से डिबरी बुझ गई। टार्च का प्रकाश कमरे म घुस आया। चारो ओर घूम कर निशा पर एक क्षण ठहरा फिर आवाज देने वाले के साथ लौट गया। निशा को पसीना आ गया कोई क्या सोचेगा। इतने म भाभी आ गई, बोली अधेरे मे ही क्या बैठे है ढिबरी नही जला ली, भाभी ने रोशनी की। निशा किसी अज्ञात आशका से घबरा गई थी। भाभी वही पास मे ही दूसरी खाट पर लेट गई मुझे बहुत कम होश था, शायद भैया आये थे वह रहे थे अरे इसका माथा तो तप रहा है, पानी की पट्टी रखती रहना, फिर सर तक उढा दिया। भाभी कह रही थी, निशा बहन अब तुम सो लो थोडी देर मैं जाग रही हूं।

निशा चुप थी।

मुझे नीद आ गई।

सवेरा हुआ तो सूरज के लाल चेहरे पर गहरे काले बादल की कालोंच लगी हुई थी, सारे मोहल्ले मे एक ही हवा बह रही थी निशा रात भर गगन के कमरे मे रही है। सवेरे बाहर निकली तो किसी ने कहा रात तो अच्छी कटी।

निशा ने मुडकर नही देखा, सर्र से घर निकल गई। घर पर प्रभाजी बोली, 'वैसे दार्शनिक है, योग्य है, भावुक है, अच्छी जोडी रहेगी।'

[उम्रद

'दीदी ! मेरा नहीं तो कुछ दूसरों का तो खयाल करो, गगन की इज्जत सफेद चादर जैसी है।' निशा को लगा जैसे सारे घर मे कालिख पुती हुई है कहा बैठे।

घर के पनघट पर भी आज भीड देर तक जमी। मेरा ज्वर अब हलका था। ब्रश करता बाहर आया तो सुना चाची कह रही थी, ऐसी बेसरमी तो हमने न बहन देखी। दखने से तो बडे सीधे लगते हैं।'

सभी ऐसे ही लगते है। और न जाने क्या क्या फुसफुसाहट हो रही थी। भाभी ने तिनक कर कहा, मेरे गगन जैसा जमाने मे एकाध ही मिलेगा, उसके बारे मे ऐसा न कहना चाचीजी। रात भर तो मैं उसके साथ रही हू अभी दुनिया से धरम उठ नही गया है।'

'अरे ! रहने दे मोय काह को दीदा दिखाय रही है रात को गगन ने कैसे कह दिया प्रभा से कि निशा यहा नहीं है, बहू अधेरे में भी आखें होती है।'

मैं अब समझा तो लगा जैसे खून जम गया हो। सारी घटनाए एक दम घूम गई, लगा जैसे अब नशा उतर रहा हो और कनपटी के ऊपर फिर सूजे भोकने जैसा दर्द शुरू हो गया। भाभी चुपचाप अन्दर चली गई। मैं भी कुल्ला करके आकर ओढकर लेट गया। मुझे बहद पसीना आ रहा था मुह तक कम्बल ओढे पडा रहा। भाभी आई पूछने लगी, 'क्या खाओगे लाला खिचडी या मग , अरे तुम्हारी तो आखें लाल हो रही है मुह ढाप कर रो रहे थे क्या छि तुम्हारा लडकपन नही जायेगा,' मुझे अन्दर से रुलाई सी आ रही थी, स्वय को साधा, 'फिर पूछा, भैया खाना खा गये क्या ?'

'हा, अभी ही गये हैं तुम्हारे लिए दलिया बनाए देती हू, और इन गए गुजरे लोगों की बात से मन मत दुखाओ। इनका क्या, कुछ सोचते हैं, जो मुह आता है कहते हैं।' बाहर न जाने लोग कैसी-कैसी कल्पना कर रहे होंगे। जैसे तैसे साझ हुई, अपने आपको साधा। अब तबियत कुछ हल्की महसूस कर रहा था। कपडे हैन्ड बैग मे रखकर बन्द

किया तो भैया आ गये, पूछा, जा रहा है क्या? कहकर चारपाई पर बैठ गये, तो उनके कंधे पर सर रखकर रो पड़ा जैसे कोई बांध टूट गया हो।

'पगला है, ऐसे ही अपने आस-पास सब सुधराने की कोशिश करेगा। ज्यादा लोग ऐसे ही हैं, उन्हें धैर्यपूर्वक समझना होगा, समझाना भी होगा कुछ भी इतनी आसानी से नही बदलता।'

'नहीं भैया, हारा नहीं हूं आहत शायद इस बात से ज्यादा हुआ कि ये अपने लोग हैं, मेरे ही घर गांव के बस।'

'तबियत ठीक न हो तो आज न जा फिर चले जाना।' भैया ने सर पर हाथ फिराया। मन शान्त हो गया था, सो कहा, बिलकुल ठीक हूं अब बस का वक्त भी हो गया है चलूंगा अब। विदा, लेकर बाहर आया, भाभी द्वार तक पहुंचाने आईं।

सामने की हवेली मे बड़ी भीड़ लग रही थी। कोई कह रहा था निशा को फिर दिल का दौरा पड़ गया है। मेरे पैर ठिठक गए। अन्दर से कोई धकेल रहा था, बैग भाभी के हाथ मे देकर हवेली मे देखने चला गया। मुझे देखते ही लोग अगल बगल हो गये जैसे किसी से छू न जाऊं। निशा को असहय पीड़ा थी। मैंने पूछा किसी डाक्टर को बुलाया, सब चुप रहे, पीछे भीड़ मे से कोई बोला, डाक्टर यहां-कहां है हकीम जी को लिवाने कोई गया था, देर हो गई शायद आते होंगे। मैं बेबस हो रहा था। वह बोली, शायद समय हो आया है। फिर निढाल हो गई। ऊपर से नीचे तक आग दौड़ गई। दौड़कर भाई साहब को जाकर लिवा कर लाया, उन्हें बिठाकर इक्का लेने चला गया, छोटा सा कस्बा कोई टैक्सी तो यहां कहां मिलेगी। मेरी मुट्ठियां बार-बार कस जाती खुल जातीं।

इक्का लेकर लौटा तो सब लोग बाहर खड़े मेरी प्रतीक्षा कर रहे थे। भाई साहब ही निशा को गोद मे उठा कर लाये ठीक से तकिये का सहारा देकर इक्के मे बिठाया तो निशा बोली, कितना कष्ट दे रही हूं

आपको सबको, और....।' फिर बोला नही गया आख मूंदली। सारा चेहरा खिंचकर पीडा का तीखापन व्यक्त कर रहा था जितनी घृणा सभी दे सकते हैं दे रहे थे, मात्र घर का रिश्ता निभा रहे थे। गली के बच्चे बडी रहस्यमयी निगाहो से मुझे देख रहे थे। भाभी ने मुझे बैग दिया। उनकी आखें भीगी हुई थी मैंने उनके पैर छुये। भीड मे खडी प्रभाजी को नमस्ते किया उनके साथ वे ही कल वाले मि० सक्सेना खडे थे।

मोटर तैयार खडी थी। करीब आठ बजे हम लोग शहर पहुँचे, मानिकपुर। हॉस्पिटल पहुँचे यहा कुछ नर्स और बडे डाक्टर घोष मेरे पूर्व परिचित थे, तुरन्त दाखिल करा दिया। आधा घण्टे मे ही सब ज्ञात हो गया कि कोई गम्भीर बात नही है, दर्द के लिये इन्जेक्शन दे दिये गये हैं। सुबह जल्दी आने का आश्वासन देकर, शहर मे अपने किराए पर लिये घर पर जहा रहता आया था वही चला गया। रात भर ठीक से सो नही पाया, अपनी थीसिस के पृष्ठ उलटता रहा, 'आधुनिक जीवन मे अन्तर्मुखी तटस्थता और स्वावलम्बन की बैसाखी।' सोचता रहा कैसे पूरा होगा यह शोध और हो भी गया तो ग्रन्थ लिखने से क्या होगा, यह जो आदमी, आज का, हर जगह व्यक्तिगत स्तर पर आज के अर्थतन्त्र मे भावनात्मक स्तर पर टूटा है उसे कौन सा दर्शन फिर से सामाजिक बनायेगा। रात देर तक परेशान सा रहा फिर आधीरात बीते नींद आ गई।

सुबह करीब आठ बजे फल लेकर आया तो निशा अपने बैड पर नही थी। एक परिचित नर्स ड्यूटी पर थी– 'नूर आपा,' सारा हॉस्पीटल ही इन्हे आपा कहता है क्या मरीज क्या डाक्टर। उनसे पूछा तो वे मुस्कराई, कहा जो नए डाक्टर आए हैं हमारे यहा वे उन्हें घर लिवा ले गये हैं, डाक्टर दिवाकर। मेरे चेहरे पर जिज्ञासा और कौतूहल था, इसलिये वे कह रही थी, वह जो नीचे बगला देख रहे है, जहा धूप आ गई है, वही। डाक्टर दिवाकर से उनके सबध पहले से थे। दो वर्ष पहले सगाई हो गई थी, पर किन्ही कारणो से मतान्तर हो गया था।

रात वे ड्यूटी पर आए तभी एक घन्टे बाद लिवा ले गये। आपको जाने को कह गये हैं।'

'हूं।' मेरे मन मे अकस्मात् ही धूप के कई छोटे-छोटे फूल-एक के बाद एक खिलते गये हैं मैं उधर ही देख रहा हूं डा० दिवाकर के बगले की ओर।

'आपको पहुंचादूं वहा चलिए।'

'हा जरूर चलूंगा, आपा ! अभी....। आप ऐसा कीजिये सुविधा हो तो ये फल काट लाइये, और सुनिये वो जो फ्लावर पाट मे दो नरगिस के फूल लगे हैं न। मयूरपखी के साथ बधवा दीजिये।'

'लेकिन ये फल तो ?'

'हां हां लाया था, पर आपा ! फल तो अब..... आपा आपने कभी कोई केस लेकर, ठीक होते देखा है उस मरीज को ?'

'हा आ आ।'

'कैसा लगा है तब आपको ? मेरी आंखें उल्लास से गीली हो आई है। शायद। आपा फल काट लाई है। प्लेट मे सजी हुई सेब की फाके है और दूसरे हाथ मे मयूर पखी है। मैं फूल ले लेता हूं।' धन्यवाद।'

'और ये फल ?'

'मुह खोलो।' एक फाक उठाकर आपा के मुंह मे दे देता हूं एक खुद ले लेता हूं। उन्होंने मेरे गाल पर हलके से चपत लगाई है।

'फिर धन्यवाद।' नीचे उतर कर डाक्टर दिवाकर के बगले की ओर चल दिया हूं। नरगिस के फूल बहुत ताजे लग रहे हैं। रात भर कागज पलटने का और जागने का जो भारीपन था अब घुल-पुछ गया है।

☐ मधुमती.

[उग्रह

एक शाम व्यस्त

बहुत देर से इसी कोशिश में था कि चाय बन जाय तो दिमाग सारी परेशानियो की तरफ से समेट-समाट कर उस सग्रह की शेष कविताए भी फेयर करले। टाइ-पिस्ट को देदे, टाइप होने से पहले तो शायद कोई प्रकाशक देखना भी न चाहे, पर स्टोव जलता है तो इतना शोर हो रहा होता है कि बच्चो के टीन कनस्तर से निकलते साजियो का शोर, मुर्गियो की लडाई की तीखी आवाज उसी मे डूब जाती है। ऐसे मे कोशिश करके भी अपनी ही राईटिंग के सही अक्षर सही नही पहचाने जाते और फिर काटापीटी होने लगती है। आया से कितनी बार कहा है कि अरे काम के समय तो इन्हे बाहर कर दिया करे पर कौन सुनता है। और आया को ही क्या– खुद कितनी ही बार सोचा है कि स्टोव में बर्नर बदलवाकर साइलेंसर लगवाले, पर हो ही नही पाता। स्टोव जलता

रहे और कोई आये– किवाड तोडता रहे, बाहर खडा कोसता रहे · घरवाले बहरे हैं क्या ?

यही हुआ भी। जैसे ही स्टोव बद हुआ एकदम शाति छा गयी–सन्नाटा, और उसी सन्नाटे मे से लगा जैसे कोई दरवाजा भडभडा रहा है। चाय का कप लेकर वह कमरे मे आ बैठता है, नही तो कुछ उसके ऐसे भी बेतकल्लुफ दोस्त हैं जो अन्दर आ बैठते है और अन्दर आ बैठना कोई जुर्म नही है, लेकिन उसके अन्दर के कमरे मे, खास किताबें रखी हैं– उसके चहेते लेखको की। कुछ रिसाले है, बीवली मथली इश्यूज, स्पेशल इश्यूज। उन्ह उसने इस तरह से पढा है कि छूने के भी निशान न पडने पायें पर अभिन्न साथी लोग आते हैं खिडकिया पर पडे परदा के बावजूद रिसाले नावेल उठा उठाकर देखेंगे, लापरवाही से निकालेंगे। पूरा परदा भी नही खोलेंगे और फिर चलते-चलते उस ढेर मे से चार किताबें बगल मे दबाकर कहेंगे इन्हे मैं ले जा रहा हू और लहजे मे कोई ऐसी तर्ज नही होती कि माग रहे हैं सिर्फ सूचना भर देते हैं– जैसे कोई अपनी पुरानी पत्नी को चलते चलते कहता है– घूमने जा रहा हू देर से लौटूगा, और फिर जवाब सुनने की फुरसत या जरुरत नही होती।

फिर खट-खट हुई, चाह रहा था पूरी चाय पीकर ही बोलता पर भडभडकी आवाज मे इस बार झल्लाहट थी। दरवाजा खोला, देखा राजेश भाई आये हैं।

राजेश भाई यहीं शहर के डिग्री कालेज मे भाषा विज्ञान के प्राध्यापक है। वह और राजेश भाई मिलकर एक किताब सम्पादित कर रहे हैं। किताब अच्छी बन रही है और इसके लिए अकेले राजेश भाई ही प्रेस मे ज्याद ड्यूटी दते हैं। उसे इतना समय ही नही मिल पाता, क्या करे। इसीलिए जब भी ये आते हैं वह पूरा ख्याल रखता है कि उनकी इस व्यस्तता को वे कुछ और न समझ बैठें।

'कहिये राजेश भाई, चाय लेंगे या ठडा, चाय तो तैयार है वैसे।'उसकी बात बीच मे टूट जाती है वे जल्दी मे है, देखो उस्मान

[उग्रह

भाई जल्दी करो घर पर बच्चे की तबीयत ठीक नहीं है, डाक्टर को दिखाना है, पत्नी साथ जायगी। छ बजे का वायदा कर आया हूं और देखो साढे चार बज चुका है उठो कपडे पहनो, प्रकाशक के पास चलें कुछ इशारा करें। यार, सम्पादन के क्या देगा, क्या नही देगा— कुछ हुआ तो लगे, ये बिजनेसमैन हैं। और न दे तो न सही, अपनी कोई किताब ही छाप दे, उसके इक्ट्ठे पैसे देदे ... उठो यार टाइम कम है।'

वह कपड़े पहनता है, सोचता है पच्चीस-पचास जो मिल जाय कुछ तो ...।

अम्मी रात भर खासती रहती है कितना कहा है तली चीजें न खाया करें, पर पुरानी आदत इस उमर मे क्या छूटेगी। चलें, कुछ मिल जाय तो हकीम चाचा को भी कुछ देदें तो दवा लेते वक्त अपनी भी निगाहें खुली रहे।

....

'अच्छा आपा! अम्मी से कह देना थोडी देर से लौटूंगा, मेरा इन्तजार न करें, खाना खालें।'

'और इस सकेदा को... अस्पताल नहीं ले जाओगे?'

प्रश्न उसके मन मे अटक कर हिलता रहता है— सारी मुर्गियां मर सकती है कुल दस तो रह गयी है, तब मे थोडा-बहुत सहारा है वह भी....। पर कल शायद कुछ बने....।

'कल दिखला आऊंगा, काम जरूरी है न। देखो राजेश भाई का बच्चा भी बीमार है, वह भी तो परेशान हो रहे है।'

आपा ने क्या सोचा होगा, क्या कहा होगा, वह चाहकर भी नही सुनता, साइकिल उठाकर राजेश भाई के साथ चल देता है। साइ-किल पर चढते ही बिल्ली रास्ता काट गयी है।

कम्बख्त, उसके मुह से निकल पडा है। फिर सोचकर हसता

है कि वह इन ऊल-जलूल बातों को नही मानता, फिर भी इन सुपर-स्टीशन्स से कैसे जुडा हुआ है।

नुक्कड पर इफ्तखार चाचा कबाब सेंक रहे हैं, लोग खा रहे हैं खुशबू उसकी नाक से होकर दिमाग ताजा करती है, जबान पर आकर ठहर जाती है, पर एक तो आज पैसे नही, दूसरे राजेश भाई भी जल्दी म है। उसका खुद का सग्रह अगर प्रकाशक लेले तो पचास रुपये द दे तो, राजेश भाई की दावत करेगा, कलेजी-करी की बहुत तारीफ करते हैं ये, एक बार, अम्मी से ही बनवाऊगा।

बकरिया लौटकर आ रही है। गली कितनी सकरी है, ओफ्फ . दर पर देर होनी है। राजेश भाई फिर घडी देख रहे हैं। धूप मस्जिद की मीनारो पर टग गयी है और सुनहरी लग रही है। नीचे गली से मौसमी धूप का गुनगुनापन है। फिर भी, हवा ठडी हो चली है।

चौडी सडक पर आकर दोनो सास लेते है। दाहिने मुडकर सुभाषगली मे ही प्रकाशक महोदय हैं। वैसे देखने मे दुकान छोटी है, पर बडे व्यापारी हैं। पुस्तकालयो मे हजारो की किताब सप्लाई करते है। उठकर वे राजेश भाई के दोनो हाथ थामकर बडे अदब से बैठाते हैं, उससे भी नमस्ते करते हैं। उसे तुरत छोटा छोटापन सा अपने मे लगने लगता है। वह कवि है तो हुआ करे, किसी से क्या। कविताए छपती हैं तो छपें, प्रकाशक तो अपना पहलू देखता है। उसे लगता है, उसकी दोव आज बढ आयी है। वह गालो पर हाथ फिराता है और कुरसी मे धसकर बैठा रहता है।

'चाय लोगे ?'

'नही, अभी चाय का बिलकुल मन नही है।

'फिर, पान तो चलेगा ?'

'हां, पान मगा लीजिए।'

[उपर्द

'अच्छा, रामधन जा एक, दो, तीन, चार, पांच, और कपूर साहब, आप पान तो खाते है न।'

'मंगवालो–मगवालो यह क्या नही खाता पंजाबी है, कुछ छोड़ने वाला है? कोई दूसरे सज्जन हैं।

'हा, जा, छः पान लगवा लाओ फटाफट।'

'अरे! रामधन सुन, पान मे पिपरमेंट जरूर डलवा लेना।'

रामधन दुकान पर सेल्समैन है, पलटकर राजेश भाई को हाथ से स्वीकृति देता है और चला गया है। राजेश भाई पान मे पिपरमेंट जरूर लेते हैं। हमेशा, सफेद-झक धुला कुरता-पाजामा पहनते हैं, उस पर सुनहरी सिल्क की जाकेट। बगुले के पंख पर दाग हो सकता है पर उनकी ड्रेस हमेशा टिनोपाल लगी रहती है– झलकती धूप-सी।

प्रकाशक महोदय ने कोई किताब निकालकर दिखायी है, 'देखिए ये नयी पुस्तक आयी है।'

कोई भाषा-विज्ञान का शब्दकोष है।

'अच्छा है, कालेज बुक्स मे डाल दीजिए।'

'साब दो किताबें अभी तक आपने सेलेक्ट नही की.... ।'

'अभी कर दूं, लाइए।'

'हां, मेहरबानी हो जाय।'

किताबों का ढेर लग गया है, उपन्यास, कहानी-संग्रह, आलोचनात्मक, आधुनिक पुराने कवि।

'च्च....च्च, ये किताब क्यो रखदी आपने....इनमे देखिए, एक से एक गाधीजी पर इससे कई अच्छी किताबें है– ये देखिये–।'

'निःशस्त्र लड़ा वह शांतिदूत

भारत मा का लाडला पूत

वह शत्रु पक्ष की आंधी था

वह गांधी था, वह गांधी था।'

'छि' क्या कविता है। पोथा लिख मारा है— पचास साल पुराना ढर्रा, और गेटअप कितना थर्ड क्लास।'

'अजी क्यों थर्ड क्लास कहते हैं? ये नहीं देखते, महाकाव्य है किस पर, आजकल तो बच्चे भी थर्ड डिविजन को गांधी डिविजन, थर्ड क्लास कम्पार्टमेंट को गांधी बोगी कहते हैं। फिर य तो उन्हीं का जीवन-दृष्टांत है जी। बैठे हुए तीनों लोग हो-हों-हो- हंसने हैं।

रामधन पान ले आया है।

'लो मिस्टर माथुर। . कपूर। . शर्मा। .. लो भाई गर्ग। . उस्मान भाई। . ये आपका है प्रोफेसर साहब।'

'लिखा किसने है?'

'कोई शास्त्री है।'

'अजी बस यूं ही सरकार से पैसा पीटना होगा— गांधी शताब्दी मनायी गयी न— सो मौका था अब सरकारी पुस्तकालयों में तो ले-ही-ली जायेगी। शर्माजी ने उठकर पीक थूकी है।'

'क्या कीमत है?'

'तीस रुपये।'

लो साव लूटो— प्रकाशक और लेखक दोनों के मजे हैं। तुम तो यार कुलश्रेष्ठ घसंदास हो, ऐसी ही कोई फासो मुर्गा। कपूर गर्ग के

कन्धे पर हाथ मारता है। अजी बताये है कि शास्त्रीजी के बड़े भाई आजकल अच्छी आवाज रखते हैं, और हम तो व्यापारी है। आप चाहो तो रखलो एक कापी, नहीं तो सूचना केन्द्र मे चली जायगी।'

कुलश्रेष्ठ के होठ के कोने पर पान बह आया है।

'रखे लेता हूं एक कापी....पर ये देखिए।'

'अबकी किस नेता पर काव्य है....?' कपूर ने फिर चटखारा लिया है।

'नही जी।'

'नही, मैंने तो यो ही कहा– लोग खूब कमा–खा रहे हैं, इन्होने ही देश की रेड लगायी। साधु-साधू लोग राजनीति मे घुस आये है। अजी अपने यहा तो शुरू से ही ये ढर्रा रहा है।' कपूर के चेहरे पर इस बार लालामी झलक आयी है, वह सभलकर बैठ रहा है।

'क्या ढर्रा रह रहा है– तुझे बनादें मिनिस्टर। कुरसी पर बैठ के देखो तो मालूम पडे' किताबें बेच ली और रात को खर्राटे भर लिये, हरे मे चुग रही हैं न?' माथुर ने चुटकी ली है, 'ले चल सिगरेट, निकाल माचिस।'

अब वह समझ पाता है, ये कपूर महाशय किसी बुक कपनी के एजेंट है या प्रकाशक है।

'अरे! तो तुम क्या समझते हो ये नक्सलवादी, क्या आतरिक असतोष का परिणाम नही है?' कपूर इस बार रोष मे है।

'ये...., अरे ये तो आपके यहा से ही प्रकाशित है– एक बात कहूं....।' राजेश भाई के हाथ मे कोई किताब है।

'कहिए। कुलश्रेष्ठ के चेहरे पर मुस्कान है, हाथ जुडे हुए है।'

'ऐसा सस्ता साहित्य मत छापा कीजिए, इसमे क्या है?'

'अजी बस....क्यो....बेकार,... हम तो व्यापारी है, कोई छापने के भी पैसे देकर....साब, यो ही रहने दो अब।'

राजेश भाई वह किताब कालेज बुक्स मे डाल लेते है। वह दूर से ही नाम पढता है– अरे ! ये तो वही .. उस दिन तो बडे लेक्चर झाड रहे थे स्वाभिमान पर, कैसे लोग है। राजेश भाई ने करीब डेढ सौ किताबो की लिस्ट बनादी है ...रामधन अभी और किताबें निकाल रहा है। मिस्टर कपूर ने मेज पर धडाक से हाथ मारा है।

'ये क्या ...? जनता क्या कोई मुर्गा-मुर्गी है– दाना डालो, दरबे मे बद रखो, सोने के अडे खुद रखो।' कोई बहस चल पडी है फिर।

'क्यो, इसमे ऐसी क्या बात है– शासन, शासन है कपूर। देखो, तुम क्या समझते हो, क्या जनसघ, क्या कम्यूनिस्ट, आदमी सब जगह आदमी है और राजनीति तो विषकन्या है जिसके मुह लग गयी...., गया.... ।'

उसे ये सब शब्द रटे हुए मोनोटोनस से लगते हैं। यहा क्या कर रहे है ये लोग। बाहर गली मे चलते फिरते लोगो की शक्लें अब साये सी लगने लगी है। ठड मे लिपटा अन्धेरा बढ आया है। रोशनियो के बल्ब छोटे-बडे हरे, नीले, दुकानो मे से झाक रहे है। दो घटे बीतने को आये, अम्मी को खासी का दौरा पडा होगा, और मुर्गियो को .., खैर अब कल दिखाऊगा। अम्मी का पारा खूब चढा होगा, राजेश भाई ये क्या ले बैठे।

'राजेश भाई।'

'एक मिनट .., हा कुलश्रेष्ठ भाई अभी ये काफी है।'

फिर मेज पर जोर से हाथ मारा है। इस बार माथुर जोश मे है, दूसरे महायुद्ध के बाद की फ्रास की स्थिति भारत के साथ किसी सदर्भ मे जोडी जा रही है।

'अच्छा तो ठीक है,' कपूर कहता है– 'अच्छा तो ठीक है, ये राजेन्द्र प्रसादजी को राजनीति में आने की क्या जरूरत थी– क्या जरूरत थी डा० राधाकृष्णन् को आने की– दार्शनिक थे, साधू थे। समाज-सुधार करते, विनोबा की तरह यज्ञ करते, आजादी के लिए तकलीफ सही थी तो क्या कीमत है उसकी ? जनाब, लड़ना और शासन करना दो अलग अलग चीजें हैं।

'आप राजेन्द्रप्रसाद के बारे में कुछ नहीं कह सकते, राजेन्द्रप्रसाद और शास्त्रीजी ये दोनों आदर्श व्यक्ति थे। हीयर आई डिसएग्री विथ यू आप और किसी को कुछ कहिए ...।' राजेश भाई के चेहरे पर रोष अधिक है, बहस शुरू होने से पहले उनके साथ यही होता है, उसे लगता है कपूर न माना तो बहस लम्बी खिंचेगी, अब।

'लेकिन राजनीति और आइडियालाजी से क्या संबंध है।' कपूर अब इधर जम गया है।

'फिर– आइडियालाजी आपकी डेफीनीशन से चलेगी, जनाब राजनीति खुद अपने आपमें एक आइडियालाजी है।'

'अच्छा है हां, पर क्या वहां रामायण पढ़नेवाला भगत चाहिए, क्यों कुलश्रेष्ठ भाई ?'

कुलश्रेष्ठ मुस्कराता है, 'ये बता, घर चल रहा है ? नौ बजे प्राइममिनिस्टर की स्पीच आनी है।'

'यार कहां टाइम है, बिलकुल फुरसत नहीं है। अब देखो आठ बजे स्टेशन जाना था– आगरे से अपना एक यार आ रहा है, उसे रिसीव करना था, यार। मरने की तो फुरसत नहीं है।'

'ओफ ! आज दिन गया राजेश भाई, उठो।' उसके अन्दर बहुत ठंडी चीज गलती पिघलती जा रही है, उठो....ओफ् आठ बज गये . ,।' 'अच्छा। कुलश्रेष्ठ साब ये पुस्तकें लाइब्रेरी भिजवा दें, लिस्ट पर साइन कर दिये हैं मैंने....अच्छा फिर आयेंगे।'

दोनो गली मे आ गये हैं।

'देखो बबलू की पत्नी अकेली डाक्टर के पास से गयी होगी, यार क्या बताए बडी बिजी लाइफ हो गयी है। अब तुम्ही बताओ क्या करें ?'

वह कुछ बोल नही पा रहा है, जैसे बहुत भाप गले और दिमाग में जमती जा रही है। वह चल कर पहले से उठकर गली के नुक्कड पर खडा होकर प्रतीक्षा करता है।

राजेश भाई आ रहे हैं, दुकान के बाहर के शो-केस मे किसी का उपन्यास लगा है, 'काच का शहर', उसका संग्रह ? आज तो एक पेज भी .. ।'

'उस्मान भाई। यार भूख लग आयी है, दोपहर से ठोस कुछ लिया नही चलो क्वालिटी मे एक-एक हाफ प्लाई हो जाय, कैसा रहेगा .. ?'

उसके अन्दर से शब्द उभरते नही है– चेहरे पर एक विवशता आ जाती है, 'अब देर हो गयी, नौ होने को आया, घर पर अम्मी .. ।'

'अच्छा जाने दो।'

उसे लगता है कि राजेश सोच रहे हैं कैसे काहिल लोग भाप मे फस जाते हैं, कोई टेस्ट ही नही, क्योकि राजेश का चेहरा सहज नही रह गया है। फिर भी, हिम्मत करके पूछता है– 'तो अभी अभी पैसो की बात की क्या ?'

'कहाँ यार ! कितने लोग बैठे थे ठीक नही लगा।'

'फिर कल ?'

'अब कल नही यार, देखो न बिलकुल समय नही पाता, एक सैकेंड की फुरसत नही। क्लास के लिए नोट्स तैयार करने हैं, डाक्टर के यहा जाना होगा। कल प्रेस जाना होगा। अब देखो, आज ही क्या

[उग्रह

न्टाइम हो गया है।'

'अच्छा फिर सही, दो एक दिन मे ..., अच्छा नमस्ते।'

लगता है रात बहुत हो गयी है। वह साईकिल पर चढ लेता है। आज भी कुछ न हो पाया– न एक भी नया पन्ना लिखा, न अम्मी की दवा... , आपा खूब गुस्सा हो रही होंगी। पता नही सफेदा, मरी या जिंदा रही, और किसी को तो बीमारी नही लगी ... ।

चचा की दुकान पर कबाब भुनने की गंध तेजी से उठ आई है। कुछ लोग बैठे ठहाके लगा रहे हैं। अरे, ये तो वही ग्रुप है— कपूर, शर्मा, गर्ग, कोई बहस कर रहे हैं राजनीति पर.... ।

उसके अपने हाथ पसीज आये हैं, और गली मे अन्धेरा है। वह सभलकर साइकिल गली मे मोड़ लेता है। गली कितनी उबड-खाबड है, उसे साइकिल सभालना मुश्किल हो रहा है— कितना अन्धेरा हो गया है।।

...

।□ नई कहानियां

प्रतिध्वनि

रात आठ बजे,
२१, मार्च
पंचवटी, गाजियाबाद

मेरे,

आज लम्बे अरसे के बाद फिर पत्र लिखने का साहस जुटा पाई हू मैंने अपने पत्र के प्रतिउत्तर की प्रतीक्षा की और पत्र न पाकर लगा कि मैं हार गई हू। आदर्श आप पर पूरी तरह सवार हो गया है और भावनाए दब गई है। मेरा फिर पत्र न लिखना आपको अच्छा लगा होगा, मुझे भी कुछ सन्तोष मिला कि मैं फिर से आपको बाध्य नही कर रही हू, पर आपके मन के किसी कोने में कुछ कसक भी हुई होगी— मेरा पत्र न पाकर अनजाने म ही प्रतीक्षा की होगी और मेरा पत्र न लिखना बुरा भी लगा होगा आपको। पहले भावना के साथ सोचा होगा कि मैं आपकी बातें मान गई हू और आपको भुलाने का प्रयास कर रही हू— मैंने अपने पति को कई पत्र लिखे है— और अब आपको पत्र नही लिखूगी, पर कहीं ये भी

मन में आया होगा कि सब प्यार झूठे होते हैं, सब धोखेबाज और स्वार्थी होते हैं, आखिर वह ही कब तक ऐसे भुलावे में पड़ी रहती जो उसे हमेशा दूर से ही आकर्षित करता– पास आने पर दूरियां और बढ़ जातीं। मुझ पर खीझ आ गई होगी– मेरे प्यार के झूठे दम्भ पर घृणा भी। पर तुम्हें विश्वास तो न होगा मेरे दिवा कि इतने दिनों में मैं तुमसे एक पल भी दूर नहीं रह पाई हूं। हर कदम पर अपने को तुम्हारे साथ पाया है।

पत्र लिखकर सम्बन्ध जोड़ना पाप है, अन्याय है उनके प्रति जो हमारे जीवन से जुड़े हैं, और इसीलिए तो पत्र नहीं लिखा आपने मुझे, हालांकि आपके पत्र में दूषित ऐसा कुछ होता तो नहीं है बस आदर्शवादिता और नैतिकता के उपदेश फिर भी वह गलत है। जब ये गलत है तो फिर इस पाप से क्यों नहीं रोकते जो मैं प्रतिपल तुम्हें अपने पास जान के कर रही हूं। इसका प्रायश्चित कैसे होगा। संस्कारों के बन्धनों में दूसरे की होते हुए भी तुम्हारी हू, क्या यह पाप नहीं है जब ये पाप हो रहा है तो पत्र लिखने से ही अगर एक नुक्ता और बढ़ जाता है तो वह बहुत ज्यादा तो नहीं है।

आपके अनुसार ही तो मैं आपकी दीपा हूं आपके स्नेह की ज्योति पर पत्र लिखती हू तो उत्तर नहीं देते बुलाती हू तो आते नहीं। आना ठीक नहीं समझते, तो न आओ पर मुझसे अपने को इतना विरत तो न रखो।

सुना है जून माह के बाद कहीं बाहर जा रहे हो, और चले गये तो मुझे सूचित भी नहीं करोगे, कितनी बेबस हो जाऊंगी तब मैं तुम्हारा पता पाने के लिये। घरबार छोड़कर तुम्हें ढूंढ भी न सकूंगी, जिन्दगी भर तुम्हारी याद में घुटती रहूं पर कटे पंछी की तरह, यह बर्दाश्त हो सकेगा तुमसे? अधिक नहीं कभी-कभी दो लाइन तो लिख सकते हो— लिखोगे?

इस बार होली आई तो पिछली बातें सब याद आ गई। कैसे

दिन थे—कितने सुखद कि उनकी याद में सहारे ही सारा जीवन कट जायगा। तुम तब थोड़े अजनबी जरूर थे पर इतने पराये तो न थे। आपको याद तो होगा—मैंने ने लाल रंग का गुलाल आपके चेहरे पर लगा दिया था, रंग में सराबोर नारी का वर्णन तो कवियों ने किया है किन्तु पुरुष का सौन्दर्य इतना मनोहर हो उठता है रंग की झलक से, मैंने न पढ़ा था न देखा था। सूरज की किरणें गुलाल में नहाई थी आपने मुझसे टॉवेल मांगा था—जैसे इकतारे का तार कोई अनजाने ही छेड़ दे। आपने उस छोटे से टावल में रंग पोंछ दिया था—वह रंग ज्यों का त्यों मेरे पास उस टॉवेल में सुरक्षित है और ये आपकी—कालेज पत्रिका 'रचना' उसमें आपका वह पोर्ट्रेट छपा है जो मैंने आपको सामने बिठाकर बनाया था, उन क्षणों को मैंने बांधकर रख लिया है, शायद मेरे जीवन की वह सर्वोत्कृष्ट कृति है—ऐसे पराये क्षणों में उसे देखकर स्वयं को साधती हूं। साधती तो हूं पर जब भी आंखें बन्द करती हूं, अनेक अशुभ भावनाएं—अनेक दुश्चिंतायें चारों ओर से आकर घेर लेती है। कितनी घुटन घबराहट के साथ मुझे घेरती है—एक स्वर कहीं गहराई से उठता है—और मेरी विवशताओं से टकराकर बिखर जाता है—जीवन किसी गुम्बद की उस गूंजती ध्वनि के समान हो गया है जिसमें शोर बहुत अधिक होता है और अर्थ बहुत कम।

एक वायदा करोगे...(करोगे मुझे उम्मीद है) कि मुझे कभी भी अपने निवास स्थान से अपरिचित नहीं रखोगे, न जाने क्यों मन में यह शंका बनी रहती है कि मुझसे इतना भी छिन जायेगा कि जब चाहूं आपको कुछ लिख सकूं, नहीं सोच सकती कि कभी ऐसा न हो जाय कि मुझे यह पता ही न हो कि आप कहां है। किस तरह हार जाऊंगी तब मैं कल्पना नहीं कर सकती।

मुझे पत्र लिखना।

लिखना तो, जो कुछ भी भूलने को कहोगे भूल जाऊंगी, सब मानूंगी सच कहती हूं बुलाऊंगी भी नहीं किसी प्रकार की भी जिद

नही कर गी पर पत्र लिखना मुझे। स्त्री बहुत मायूस होकर ही प्रणय मे ऐसी याचना करती है निराश न करना। चन्द शब्द मुझे अपने हाथ से लिखे भेजोगे तो सोचना मुझे जीवन शक्ति दी है। क्या हुआ है यह दीवानापन नही जानती पर हा इतना अवश्य जानती हू कि भरसक चाह-कर भी तुम्हें भुला न सकू गी। आप मुझे भूल जाएंगे, पर पूरी तरह न भूल सकेंगे ये मैं भी जानती हू।

अच्छा बहुत कुछ लिखा है, पढ़ना ध्यान से पागल का प्रलाप न समझ बैठना, मेरे अन्तर की आवाज है यह। पत्र लिखना मेरे प्राणो की सौगन्ध आपको।

आपकी—अपराधिन
दीपा

२८ मार्च। ३, बी, अवधपुरी, मेरठ

प्रिय यामा !

दीपा का पत्र मेरे पास फिर आया है, और मैं उत्तर तुम्हे लिख रहा हू। अपने आपको घने अन्धेरे के बीच खडा पा रहा हू। रह-रह कर मेरे आदर्शों की दुहाई देकर दीपा ने जैसे मेरे रीतेपन पर चाट की है, और मेरा मन फिर ऐसा हो उठा है जैसे आकाश मे उडते युवा पक्षि का स्वर सुनकर पिंजरे का तोता छटपटाये और तीलियो के घेरे को चोच और पजा से वस नापता फिरे— कितना छोटा आकाश हो गया है मेरा।

तुम तो जानती हो जब गगा का व्याह हुआ, हम लोगो की उमर ही क्या थी ? शायद उसके दातो की दूध की गध भी नही गई थी। तुम्हारे सिवा कौन था जो मुझे समझता था, ठीक शरद की देवा की तरह मुझे भी बाहर पढ़ने जाना पडा था और जब लौटा तो उसका

ब्याह ही लिया था । उसने ब्याह से मुझे क्या सरोकार, किसी के भी ब्याह से किसी को क्या ! पर तुमने जब ये बताया था कि ब्याह से पहिले गगा तुमसे मिलकर बहुत रोई थी और कहा था कि क्या दिवा एक बार आ नही सकता गगा की मृत्यु से पूर्व । गगा की मृत्यु, तेरे चौंकने पर उसने कहा था हा फिर तो गगा का मन, शरीर एवं गृहस्थिन होगा पराया– मेरा अपना भी नहीं, फिर तो दिवा पाप होगा मेरे लिए। और मैं उसका पापचिन्ह थामा ! जिसने दर्द को दीपा अपने जीवन में गूथ लेना चाहती है– मुझे लगता है जैसे कोई मेरी पीडा के साथ सिसकना चाहता है मेरे दुख को जताना चाहता है, थामा ? कोई भी प्यार मुझे जैसे जाने क्यो वर्फ का सपना सा लगता है, उसे सह भी लू तो जिस दुख को लेकर मेरी उमर लम्बी हो गयी है थामा ! उसे दीपा के पति को देकर क्या करूगा । यह ठीक है कि दीपा चित्रकार है एवं मिलिट्री का सिपाही है बन्दूक और तूलिका दो विपरीत वस्तुए भले ही हो पर कभी हर्ष के हृदय म भावनाए जगी तो दर्द से ब्याह हो जायेंगी, फिर अपनी आग किसी और के सर डालने का साहस तो मुझमें कभी नही रहा है ।

फिर, भावनाओ की बात और है, किसी के सत्य को कौन सभाल पाया है– तुम्हारी बात ही कहता हू, तुम जिसे मैं बचपन से बहन से भी बढकर मानता आया । गगा के जाने के बाद– माया से जब तुम्हारा नाम मैंने थामा कर दिया तो जाने क्यो तुम्हें मेरे स्नेह पर शक हो गया था और अगले हफ्ते ही रक्षा बन्धन पर मुझे राखी बाध दी थी जबकि तुम जानती थी कि मुझे बन्धन कैसे भी स्वीकार नही हैं । और उस दिन मुझे तुम्हारे प्रति जो मेरे मन मे प्यार था उस पर शक हो गया था । उस दिन मेरे मन को कैसा लगा था जानती हो— ठीक वैसा ही जैसे किसी के गगाजल मे दुर्गन्ध मे आ जाय । उस दिन यद्यपि मैंने तुम पर जाहिर तो नही किया पर मेरा मन जैसे पत्थर हो निकला था— *और दीपा फूल बनकर उस पत्थर पर न्यौछावर है ।*

और भी जब, जबकि मैं उस बार वर्तमान परिस्थितियो से जूझ कर थक गया था तो तुमसे बीस रुपये मात्र मगाये थे— रुपये भेजने पर

तुमने अपने अनेक ऐसे व्यक्तियों के नाम गिनवा दिये थे जिन पर तुमने अहसान किये और जो अकृतज्ञ निकले थे। मुझे फिर से अपने इस होने पर तरस आ गया था– और लगा था कि जाने वह क्या था जो मेरा साहस और सामर्थ्य लेकर बीत गया है। तुमने औपचारिकता बरती थी– धीरज बुझना नहीं चाहिये। यह तुमने लिखा था– मुझे किंचित हंसी आ गई थी।

यहीं कुछ भी करने मात्र को बोझ नहीं लगता और जो है वह दैनिक जीवन के क्रम में मात्र बोझ लगता है। और जब प्यार बोझ लगे किसी को उस जीवन की परिभाषा कर सकती हो क्या? शायद किन्हीं आदर्शों की स्थापना होती है तब।

मामा! दीपा ने लिखा है कि वह समाज की रीति के अनुसार हर्ष के साथ बांध दी गई– परिवार के अभाव ने उसके ओठों पर चुप्पी जड़ दी– मम्मी और पापा की तुष्टि हो गई– हर्ष को एक स्त्री मिल गई सुख भोग के लिये— उसने लिखा है कि मैं उन्हें मानती हूं, पूजती हूं, एक आदर्श की स्थापना हो गई है— पर मुझे लगता है कि मेरे प्यार का फूल किसी पत्थर पर पड़ा मुरझा रहा है। यह भी एक आदर्श है। त्याग का आदर्श खुलकर हंसने को जी करता है। पर जो हम हैं न खुल कर रो सकते हैं न हंस सकते हैं। मेरे अन्दर जो दीमक लगी है वह इसे क्यों नहीं खा सकी— इस दोहरे व्यक्तित्व को साधने की क्षमता को अन्दर से टूटा और बिखरा हुआ बाहर से प्रसन्न और हलका। मुझे लगता है मामा कि हर आदर्श के अन्दर से किसी सफेद बेले के फूल की सड़ने की गन्ध आ रही है। फिर भी मैं इन बन्धनों को तोड़ नहीं सकता क्योंकि इन्हें बांधने वाले तुम्हारी तरह के ही लोग ही तो हैं।

मैं क्या उत्तर दूं दीपा को? गगा के लिये पाप था दिवा विवाह के बाद और दीपा को उसका विवाह अभिशाप बन गया है। और मैं दोनों ही कथानकों का अनावश्यक पात्र हूं– किन्तु एक आदर्श की स्थापना करता हूं।

अच्छा उत्तर मत देना तुम सबके पत्र मेरे अतीत को दोहराते हैं और मन के पास पुरवाई टीसने लगती है।

सुख से होगी।

दिवा

३१ मार्च, १०३ ए, गंगावतरण
वाराणसी

प्रिय दीपा,

स्नेह।

अनुभवो के आधार पर अपने को बडी मानकर तुम्हे आदर न लिखकर स्नेह लिखा है, वैसे शायद उमर का फर्क तो बहुत न होगा।

दिवाकर का पत्र मेरे पास आया है? हर शब्द उसके मानसिक अन्तर्द्वन्द और पीडा का स्वर लगता है, वह अपने आपको साध नहीं सका है— तुम्हारा दुख यही उसके दुख से मेल खा बैठा है और वह सतुलन खो बैठा है। यह तो सच है दीपा, कि दिवा ऐसा ही है कि उसे कोई भी चाहले (पर चाहने से क्या होता है) बिलकुल बच्चों की तरह सरल और भावुक थोडे से दुख से रो पडे जरा से सुख से तालिया पीटकर खुश हो— तो मैं कभी कभी उसे लडकी ही कहती थी। पर उसे देखकर अब जो उसके अन्दर तेजाब सा दुख भर गया है, कभी कल्पना भी नहीं कर सकी थी। उसे अन्दर से किसी ऐसी जगह से तोड दिया है घटना ने कि वह जख्म फिर भर नहीं पाया है— छूने से दर्द दूना हो उठता है। ओठो पर हसी भले ही हो पर कभी तुमने देखा तो होगा उसकी आखो मे, मेले मे भटके किसी बच्चे का सा खोया खोया पन रहता है और यह तो दुनिया है, यह जो सूरत एक बार बिगडती है फिर नहीं सवरती।

दिवा की गगा यो कुछ नहीं थी, सावली सी खामोश लड़की—पर दिवा का जीवन अभिशाप बन गया। यों उसके ओठो पर हसी के फूल अभी भी उगते हैं पर उनमे अब सुगन्ध नही होती। यह कैसी वीरानगी है। महसूस तो करती होगी, ऐसी ही गलती तुम भी कर बैठी हो दीपा। गगा के बाद लाख कोशिश करके भी दिवा के ओठो को मैं सवार न सकी, न उसकी आखो मे भटकी निगाहो को कोई ठहराव दे सकी और दिवा की माग भर दी। पर मेरी समाई हो गई, होनी थी, दिवा मेरे लिये पाप न बन जाये— मैंने उसके राखी बाधकर पवित्र कर लिया समाज की दृष्टि मे पर वह मेरे लिये उस दिन से और पराया हो गया।

मैं अब एक गृहस्थिन हूं।

दिवा ने कितना सहा है, उसके चेहरे पर बनी लकीरो मे पढा तो होगा तुमने। बिलकुल जैसे पत्थर के बुत के चेहरे पर कोई सगतराश कुछ रेखायें छोड़कर रह जाय। ऐसा ही अधूरापन रह गया है उसमे। और अब वह जो अपनी गृहस्थी के पास रह रहा है— इन कुछ वर्षों मे ही मुझे यह पहचाना भी नहीं गया— कितना चुप और सधा हुआ जैसे कोई बच्चा दियासलाई के डिब्बो का घर बनाय। तबसे मैं चुप हूँ दीपा उस डिब्बो के घर मे एक प्राणी और रहता है। वह घर उसका है, वह घर टूट गया तो वह कहा जायगा— यह धडका उसे भी छू गई तो क्या होगा? दर्द का वक्त अगर चुप्पी मे गुजर जाय तो अच्छा है— यह जिन्दगी है ही क्या किसी बीमार की बेहोशी की आखिरी रात है। फिर तुम तो चित्रकार भी हो। सौन्दर्य को बिखेरना जानती हो। उसे चित्रो मे नही भरो— पत्थर पर फूल मुरझने मत दो। उसे पत्थर बना दो जिससे वह भी पत्थर का अग लगे।

हम सभी तो एक ही सूली पर टगे मसीहा हैं। पर रोने से सलीब की पवित्रता पर दाग आ जायगा।

यो कौन किसे समझाये। तुम्हारी भावुकता शायद मुझे दोषी

ठहरायें, तो अपराधिन हूं पर ऐसा लिखकर तुम्हारी संवेदनशीलता पर सन्देह नहीं करूंगी।

तुम्हारी जैसी ही
यामा

३ अप्रैल, शाम ६, बजे
पंचवटी, गाजियाबाद

दिवा,

कैसे होगे कह नहीं सकती कामना है सुखी हो।

यामा का पत्र मेरे पास आया था कैसा लगा मुझे कह नहीं सकती— जैसे कोई जख्म को तीखी व्यथा में डुबो दे— तुम मुझे सीधा पत्र नहीं लिख सकते थे— क्या इतना भय खाते हो मुझसे— मैं तुम्हें प्यार करती हू यह मेरी अपनी बात है इस पर किसी का क्या हक है— तुम्हारा भी नहीं।

प्रतिदान मांग बैठी कितना दुख मिला।

यामा ही पत्र पाकर क्या करेगी वह तो स्वयं ही तुम्हारा दर्द लिये बैठी है, अन्तर मात्र इतना है कि उसने तुम्हे पाने छूने का एक वस्त्र पहना दिया है रक्षा बाध कर और मैं आडम्बर नहीं लाद सकती। जीवन में जो भी आवश्यक है वह मुझे सहज कभी भी नहीं रहा, यह मेरा स्वभाव है। भले ही मेरा चाहा मुझे न मिले— चाहा हुआ न मिले तो अनचाहा ही साथ क्यो चले।

अच्छा मेरा पत्र आने से कुछ घबडाये तो नहीं हो। तुम्हारे चेहरे पर की व्यथा मुझे घसीट डालती है। मेरी सौगन्ध तुम पत्र को

बोझ न मानना, तुम नही चाहते तो कभी न लिखूगी। यह पत्र मात्र इसलिये लिखा है, तुम्हे मुझसे लगाव नही है, यह नही मानती। पर तुम्हे मुझसे प्यार नही है सत्य यही है पर यह कभी तुम मुझसे प्रकट मत करना– तुममे गगा के विलय होने की जो आग है वह आहुति चाहती है उसी आहुति के एक ग्रास के लिये तुमने रच मात्र मुझे सराहा था और यह आग मुझमे सुलग गई तो तुम छिटक गये– यह पत्र तो मात्र इसलिये लिखा है कि जिज्ञासा जगी तो होगी, अपनी मारी हुई चोट की कराह भी सुनना चाही होगी इसलिये पत्र लिख दिया तुम्हे।

तुमने यामा को पत्र लिखा कि मुझे समझाये, यह बात मुझे कितना सालती है तुम जान न सकोगे– सच जैसे मेरा अपना रक्त सपेद हो गया था उस क्षण, जब यामा का पत्र मुझे मिला था और तुम पढकर क्या सोचोगे आदर्शवादी वही होता है जो बहुत भावुक हो, तुम्हारे भावुक मन मे मेरे पत्र को लेकर क्या प्रतिक्रिया होगी शायद घृणा करने लग जाओगे।

घृणा ही करना पर मेरी पीडा को महसूस तो करना– यामा के पत्र ने मुझे पागल कर दिया दिवा और मैंने अपने पति को तलाक दे दिया है जिसे मैं चाह नही सकती उसकी छाया मे जीवन कैसे बिता दू और बिता भी दू तो उसका क्या होगा जो मेरे उदर मे नया प्राणी आया है, क्या वह आकर यह देखे कि उसके पिता को मा नही चाहती और मा मात्र एक समाज की अभिशाप्त नारी अभिशाप जो परम्परा से चला आया है, वही वह भी भोगे। अपने लिये शायद कही कुछ नही है यह नया जो भी हो मैं इस नया दिशा दूगी जो उसका प्राप्य है उसे पाने की शक्ति भरूगी उसमे, यह सहना क्या है? क्या यही आदर्श है दिवा, घुटन पीडा जीवन मे व्याप जायें मात्र कुछ भ्रमो के कारण, यही आदर्श है क्या?

तुम सह रहे हो— तुम्हारी पत्नी वह भी, गगा भी, गगा का पति भी और मैं भी, और मेरा पति शायद वह नही। वह क्यो नही?

क्योंकि तलाक के दूसरे दिन ही एक ईसाई लड़की से उसने विवाह कर लिया है। शायद मेरा सहना उसे भी सह्य नहीं था और सच पूछो तो क्या तुम, यामा, तुम्हारी पत्नी, गगा क्या सह रहे हैं? बीत रहे हैं, टूट रहे हैं, सहना तो मनुष्य को दृढ करता है और तुम सब घुल रहे हो—दर्द का सागर खारी-खारी ही तो हो रहा है रतन तो सब बिसर गये हैं।

तुम तो पुरुष थे चुप बैठ गये। पर मैं इस कड़ी को तोड रही हू तुम्हें तुम्हारे इस रीतेपन को सह कर दृढ हो रही हू एक नई दिशा पा गई हू जीवन को घुटने नहीं दूगी उसे मार्ग दूगी। मुझसे घृणा हुई हो तो ठीक है। प्यार आयेगा नही क्योंकि मैं गगा नही हू। पर अपनी राह पर कभी थकूं तो क्या दो वाक्य न लिखोगे।

अपराधिन
दीपा

□ 'मधुमती'

[उप

गलत हिसाब

सुबह-सुबह बहुत कोहरा हो जाता है। हर बार की तरह ही रात को सोने से पहले सोचता है कि इस बार तो वह डिपार्टमैंन्टल एक्जाम मे बैठ ही जायगा, काई प्रमोशन न मिले तो न सही, सीनियरिटी मे तो नाम आ ही जायगा। पर शाम को जब वापस लौटा है तो बडे साइनबोर्ड्स के अक्षर ही उसे ठीक से साइकिल पर से पढे नही जाते थे। कभी-कभी कोई पुराना, किसी परिचित अभिनेता का चेहरा उसे फिल्म के पोस्टर पर दीख जाता है तो फिल्म का नाम जानने की उत्कण्ठा मे आखें छोटी करके साइकिल धीमी करनी पडती है, तब कही पढ पाता है .. बारह बजे के शो मे ... ।

गली मे घुसते ही घरो के दरवाजो पर सुलगती अगीठियो मे से उठते धुए से सारी हवा कडुवी लगने लगती है और मन ही मन लगा करता है, अब शायद....

रिटायरमेंट तक यदि इसी गली में इसी मकान में रहा तो क्या जीवित रहेगा। ये धुआं और ये घुटे घुटे कमरे, लोग कैसे इनमें मस्त रहे आते हैं। उसे कभी कभी अपनी इस बेहद सोचते रहने की आदत पर खीझ भी आने लगती है। इसीलिये जब भी मन लगातार ऐसे ही वातावरण से मेल खाकर छोटा छोटा होने लगता है तो वह डिम्पल और किट्टी को बुला लेता है और चारपाई पर लिहाफ ओढे बैठकर उन्हें पहाड़े याद कराने लगता है। तभी कनु भी आ खड़ा होता है और चुपचाप बड़ी-बड़ी आखों से यह कार्यक्रम देखता रहता है। आज भी यही हुआ। सुबह सुबह आंख खुल गई। शनिवार है, इस दिन व्रत रख लेता है, सुबह खाना नही लेता, शाम को चाय वगैरह लेकर या तो ब्रेड ले लेगा या कोई फल, केला या अमरूद वगैरह। तब शनिवार की सुबह आफिस जाने के पहले उसे खाने का समय थोड़ा खाली मिल जाता है। इस समय या तो वह अपनी साइकिल साफ करता है या साप्ताहिक कार्यक्रम के अन्तर्गत पत्नी से घर के सबध में बड़ी गम्भीरता से खर्चों के ब्योरे गढ़ता है कि कौन से व्यय इस माह कट सकते है? पर आज ऐसी कोई बहस नहीं हुयी, न पत्नी उसे थोड़ी राह में बैठी मिली। बाल खुले हुये थे, नहाकर लौटी थी। नहाकर सदैव वह, एक भजन है, जिसे वह धीरे धीरे गाती रहती है, वही गुनगुना रही थी। डिम्पल और किट्टी स्कूल चले गये हैं। कनु जादूगरो वाला थैला उठा लाया है, जब डिम्पल और किट्टी स्कूल चले जाते है तो उसे खेलने का अवसर मिल जाता है, और तब वह एक मैकेनिक की तरह उनके जोड़ो को ठीक करने में लग जाता है। उन खिलौनो मे शायद ही कोई साबुत है। रेल के पहिये हैं तो रिंग्स गायब है, चाभीवाली कार की स्प्रिंग बेकार है। वह उन्ही में जुटा है।

'सुनिए! देखिए ये फिर उनके खिलौने उठा लाया है, वे दोनों आकर क्लेश करेंगे, साढे तीन बरस का हो गया ये भी कब , कब भेजेंगे उसे न जाने स्कूल।' पत्नी कही काम में व्यस्त बड़बड़ा रही है। वह साइकिल पोछकर अलग हो चुका तो देखा, अगूठे उगलिया काले हो गये है। कपड़े से पोछा तो कालौंच और फैल गई, कपड़ा रखकर उसने पैंडेल घुमाकर तेजी से पहिया चलाया और ब्रेक लगाकर देखा, खट, पहिया

[उग्रह

रुक गया। वह प्रसन्न हुआ है, गद्दी पर हाथ मारकर पूरी साइकिल को देखा है, फिर घन्टी बजाकर कपडे से उसे भी पोंछा है।

'सुनती हो, जरा हाथ धुलाना।'

'अच्छा, आई अभी।' टावेल कधे पर डाले पत्नी आ गई है, हाथो पर पानी डाला है। पानी गुनगुना है, महसूस करके मन प्रसन्न हुआ है। हाथ धोकर पत्नी की धोती से हाथ पोंछ लिए है।

'अब देखिये यही तो , ये टावेल किसलिए है मुझे क्या है, साबुन तो आप ही लाकर देंगे ?'

'साबुन ! तुम कहो तो फैक्ट्री खुलवा दू ।'

'रहने दो बस कोरी बातें.... ।'

'अच्छा, सच बताओ, रिटायर होने पर साबुन का ही काम कर लेंगे अपन, अम्मा तो बनाना जानती थी, मैं नही जानता, बाउजी को चिट्ठी लिखेंगे-- वे जानते होगे शायद।'

'अच्छा ठीक है, कपडे पहनिए, आफिस का टाइम हो गया है, जूते पालिश कर दिए है और मोजे को धुलवाके पहिनियेगा, आपतो बस ... ।'

'बस मुझे भगाने की जल्दी लगती रहती है, कौन भैया आता है मेरे पीछे ?'

'मेरे भैया यहा क्यू आने लगे, तुम्हारे जीजाजी आते हैं, वो देखो आते ही काव काव शुरू।'

ऊपर की मजिल पर सुनहरी धूप मे एक कौवा बार-बार नीचे आगन मे घुमती चिडिया को गर्दन टेढ़ी कर करके देख रहा है।

'उ ऽ ऽ ह।'

'ऐसे जायेंगे क्या, खातिर करिये।'

'अच्छा, चाय लाओ फटाफट।'

'चाय ? चीनी लाकर रखी थी क्या आपने ?'

तीन दिन से उनकी पत्नी उससे लगातार चीनी और मिट्टी के तेल के लिये कह रही है.., पर जो आफिस का टाइम, करीब-करीब वही तेल और चीनी मिलने का समय है। बाजार में मिट्टी का तेल तो है ही नहीं। चीनी दूने भाव में मिलती है और राशन पर चीनी तीन सौ ग्राम प्रति व्यक्ति। उसने पांच व्यक्ति लिखा रखे हैं हालांकि कनु अभी छोटा ही है, फिर भी डेढ़ किलो चीनी एक माह में...., समझ नहीं पाता। देश सचालकों के निर्देशानुसार उसने चौथा बच्चा नहीं होने दिया है, कोई सिगरेट, पान या केसर-कस्तुरी या गुलाब किसी का शौक नहीं। फिर भी...। किसका दोष है कि वह वेतन में माह के बीस दिन ही पकड़ पाता है। और इस माह एक सप्ताह को जीजी आ गई थीं तो वेतन पन्द्रह को ही बीत गया था, वो तो कहिये जीजी का घर अच्छा है, पुराना पैसा है सो बच्चों को दस-दस रुपये दे गई थीं...मे सप्ताह खिंच पाया वर्ना....।

'अब चाय ठंडी हो जायगी ...क्या सोच रहे हैं।'

'ओ ऽ ऽ ह, थैक्यू मैडम, मैं तो जानता था, यू आर ग्रेट।' वह चाय का कप प्लेट लेकर अन्दर पत्नी के पास चला गया है। वह आल-मारी में शीशा टेढ़ा रखकर बाल काढ रही है। 'अब देखो कुछ....कहना मत, चाय फैल जायगी, आपके ही कपड़े खराब होंगे और आफिस को देर होगी ?'

'अच्छा, मान गया।'

'आ....अ... स्सी ऽ ऽ !' वह वह देर तक गाल सहलाती रहती है, ओठों पर मुस्कुराहट और आखों में गुस्सा लेकर देखती है। कनु

देखकर भागकर आ गया है।

'अच्छा, मम्मी को नोचा है। मारूं अभी....ए।'

'नोचा नहीं है....वो, वो, चींटी छुटाई है।'

'चींटी ! कहाँ गई मम्मी चींटी....।'

'मर गई।'

'मर गई। कहा फेंक दी पापा ?'

'अब देखो, अब तुम जवाब दो इसे, मैं जा रहा हूं आफिस।'

'मम्मी ! हम भी जायेंगे पापा के साथ, पापा हम चलेंगे आपके आफिस।'

'नो बेटे। फिर ले जायेंगे, दूर हैं न, आज देर हो गई है।'

'ले जाइये न। आप तो हमेशा टाल ही देते हैं।

'आफिस बच्चों को ले जाने की जगह है ?'

'तो मुझे ले चलिये।'

'बस, तुम हमेशा बेवक्त मजाक.... हटो रास्ते से। वह हसती-

हसती हट गई है।' कनु खिसियाया-सा खड़ा है।

'टाटा कनु।'

'नई करता।'

'न बेटे। करते हैं टाटा, करो।'

'नई करता, पापा गन्दे, पापा झूठे।'

वह हंसता, पीछे पीछे हाथ हिलाता चल दिया है।

गली मे दोनो ग्रोर नालियो मे जमादारिन ने गन्दगी वहा रक्खी है। रूमाल नाक पर रखता है, और फिर सारी व्यवस्था के प्रति उसके मन मे आक्रोश पैदा होने लगता है। गली के नुक्कड पर एक अधबना मन्दिर है। मन्दिर के अन्दर कुछ अनगढ पत्थर, और टूटी प्रतिमायें देवी के स्थान पर आसीन है। एक कुत्ता देवी पर चढ़े पुजापे को चाट रहा है। कुत्ते को भगाता है वह उससे बर्दाश्त नही होता, और जोर से पत्थर मारा है उठाकर, कुत्ता एक टाग उठाकर कें अ, कें-ऐं-ऐं, करता लगडाता चला गया है। कुत्ते पर उसे तरस आ गया है और गुस्सा अब मन्दिर बनाने वालो पर आया है। देवी की खण्डित प्रतिमा पथराई हुयी है। दोनो हाथ पैर भग्न।

यहा सडक पर ठेल-पेल और भीड है। चौराहे पर बने क्लाक टावर मे दस बजे हैं। वह झट से साइकिल पर चढता है और पेडेल घुमाता घुमाता गिर जाता है, शायद फ्रीह्वील खराब हो गया है, स्टैंड पर खडी करके पेडेल चलाता है, पर पहिया नही घूम रहा है, खडा हो गया है विवश सा। एक कुत्ता किसी मुर्गी को दौडाता पास से गुजर गया है। साइकिल गिरते-गिरते बची है। साइकिल है। खडा सोचता है, अब ?

'कहिये विनोद बाबू कैसे खडे हैं ?' मास्टरजी हैं स्थानीय म्यूनीसिपल स्कूल के, वही पुराना भला सा हसता चेहरा। अभावग्रस्त, स्थितियो से लडती थकती उम्र उनके चेहरे पर हसती रहती है।

'जी, खडा क्या हू, साइकिल खराब हो गई है आफिस का वक्त, पैडेल तो घूमता है, पहिये नही घूम रहे।'

'सारी जिन्दगी मे यही हो गया है विनोद बाबू, पैडेल तो घूमने हैं पहिए नही घूम रहे— ह्वीलफ्री हो गये हैं।' वे हसते हुए चले गये हैं। वह उन्हे देखता रहता है, उसे भी प्राइमरी मे इन्होंने ही पढाया है।

[[–उग्रह

कही भी पार्टी-शादी हो, मास्टरजी हारमोनियम लेकर जरूर रौनक करते हैं। वह एक सास छोड़ता है और घर वापस लौट लेता है।

'अरे ! . वापस... क्यों ?'

'ये साइकिल ही खराब हो गई है, लगता है फ्रीव्हील खराब हो गया है। यहा रखे देता हू और कनु को आफिस ले ही जाता हू, जब टेम्पू से ही जाना ठहरा और देर हो ही गई तो थोड़ी देर और सही, हाफ डे ले लूंगा न होगा तो।'

'मैं तो कहती हू, यह साइकिल अक्सर बिगड़ने लगी है, नई ले लो न। आये दिन पैसे खाती रहती है।'

'अच्छा। फ्री बट रही है, क्यों ?'

'नही, तो लगाओ पैसे बुढ़िया मे।' वह हस रही है, 'बपु तुम्हारे पापा तुम्हे लिवाने को लौट आये हैं, आफिस घूमने जाने को कह रहे थे न।' वह फिर उसे देखकर मुस्कुराई है।

'हम जायेंगे पापा जायेंगे।'

'हा।'

'पापा हम जायेंगे।'

'हा बेटे चलो।'

'हम जायेंगे, हम आफिस जायेंगे, गिली .. गिली अप्पा....गिली गिली अप्पा।'

'अरे ! ये क्या है, तैयार करू चलो।' मुह पोछकर कप बदले हैं।

'कोई . ? डिम्पल क्या अपना स्वेटर पहन गया है क्या, ये एक ता आधी बाह का है, कमीज भी और जगह जगह से कच्चा निकल

गया है।'

'आपसे तो कहा था, बच्चो की एक-एक पूरी बाहों की कमीज बनेगी।'

'हूं, ऐसा करो, मेरी कमीज तो नाकाफी रहेगी, तुम्हे एक वो जो गरम-सी साडी जीजी दे गई थी, इन अनाथ बच्चो को डोनेट कर दो। कमीजें बन जायेगी।'

'अच्छा, ये अनाथ हैं, तो 'ये' किसके हैं?'

'थेंक्यू मैडम, चलो कन्नू।'

'साइकिल से नही चलेंगे?'

'नही बेटे।'

'गोद मे एं....ए। गोद मे उठा लिया है।'

'वो जो, वहा सडक दिखती है न, वहा से पैदल चलेंगे?'

'हा, चलेंगे।' कनु ने उसका मुह चूम लिया है। वह देखता है, कनु की आखो मे काजल लगा है, गाल फटने लगे है, कई बार सोचा है ..., आज वेसलीन ले ही लेगा।

सडक पर दोनो ओर गावो से आये सब्जी बेचने वाले स्त्री पुरुष बैठे है। भीड है अभी भी। एक गाय मुह मे कई मूली दबाए भागती आई है, वह जरा ही बच गया है ..।, और कई गाये ताक मे खडी है। कैसे लोग हैं, पता नही सुबह से ही गाय छोड देते हैं, आखिर रखते क्यो है।

टेम्पू खडा है। खाली है, शायद अभी आया है। वह गोद से कनु को उतारता है, शाबाश। कनु दरवाजे के पास ही बैठ जाता है, कनु हाथ निकाल कर टेम्पू को थपथपाता है।

'कब चलेगा पापा ये ?'

'अभी चलेगा।' कनु उठकर पूरे टेम्पू की सीट्स पर घूमता है, ड्राइवर अपनी सीट पर बैठा चाय पी रहा है, वह धीरे से उसकी पीठ छूता है।

'हैलो बाबा।'

कनु ड्राइवर को देखकर मुस्कुराता है।

कडक्टर सवारियो के लिए रह रह कर चिल्लाता रहता है। थोडी देर मे टेम्पू सवारियो से भर गया है। कनु उसकी एक बगल मे किनारे बैठा अगल-बगल चौकती नजरो से देख रहा है। टेम्पू खुलने को होता है, तभी एक मोटी सी औरत आ जाती।

'क्यो, आपको चलना है माता जी।' ड्राइवर पूछता है। 'हा, पर जगह है।' वह भारी आवाज मे पूछती है। 'अभी हुई जाती है।' ड्राइवर कहता है– 'बाबू साब! आप जरा बच्चे को गोद मे तो ले लो।' 'क्यो!' वह परेशानी पर बल डालता कहता है। 'बस आपही लोगो की सहूलियत के लिए बाबू साब। 'आजा ओ बेटे गोद में' 'नई, हम नई हटेंगे। वह खीझ भरे स्वर मे बोलता है, 'जिद करते हैं बेटे!'

'नई!' वह उठ नही रहा है भई हमने पैसे तो दिये हैं।'

'बहस नही साब, ये लीजिये दस पैसे।'

'दस क्यो ?'

'दस क्यो

दस आधी टिक्ट लगेगी न, गोद मे उठा लिजिये उसे।'

'क्यो उठा लूं ? पूरी सीट के पैसे दिए हैं, तब नई सोचा, अब वापस के नाम पर दस पैसे।'

'साब, सवारिया तकलीफ मे है, उठाइये, जल्दी कीजिये।'

'कोई जबरदस्ती है क्या ?'

'ओ हो बेटे। आओ मेरी गोद मे बैठ जाना।' कोई सम्भ्रान्त प्रौढ हैं।

'नई जी, पैसे दिए हैं। ये लोग सवारिया भरते हैं अनाप-शनाप।'

कन्डक्टर ने कनु को उठाकर उसकी गोद मे बिठा दिया है। 'बैठिये भेन जी आप वो दो नबर वावू। आगे सरकिये जरा।'

'अरे! यू जबरदस्ती है क्या, ठीक है, सारे पैसे वापस करो, अभी उतर जाता हू मैं।'

'उतर जाइये, अभी रुकेगा टेम्पू, पैसे वापस नही होंगे।'

'कैसे नही होगे वापस।' वह उठने को होता है आसपास की सवारिया उसे रोक लेती हैं, अजी बस अब आया सदर बाजार, क्यो बेकार इन लोगो के मुह लगते हैं.., थोडी सी देर की तो बात है.., अब आया सदर– सब लोग यही कहते दिखाई पड रहे है। उसका मन उफन आता है, वह बगल मे बैठी औरत को देखता हैं जहा कनु बैठा था, एक भारी वदन की महिला है। स्लीवलेस ब्लाउज में से निकलती मासल देह। आखो मे खिचा हुआ काजल, लिपिस्टिक! उसे अरुचि हो जाती है, फिर कनु को।

'आ न बेटे, मेरी गोद मे आ जा।'

'नई।' कनु ने जोर से कहा है और हाथ एक तरफ हटा लिया है। जैसे छू न जाय।

'आजाओ न! मौसी की गोद मे, हाँऽऽ!'

'नई! उसने फिर जोर से नई कहा है और होठ निकाल कर

उसे देखा है। मौसी के नाम पर उसने कनखियो से उस औरत को देखा है, मन ही मन, मन के किसी कोने मे हसी भी आई है हल्की-सी, ये होती तो मिलवाता– तुम्हारी बडी बहन ! मन ही मन मुस्कुराया है और जो गुस्सा अभी था, फैली हुई स्प्रिट-सा उड गया है।

सदर बाजार आ गया है, टेम्पू रुका है। सभी को उतरने की उतावली है। मनु खडा तो हो गया है पर खुद को हाथ से बचाता वही एक तरफ रुका रह गया है। सब लोग उतर गये हैं तो वह उतरा है। कनु को चौराहा क्रास करने से पहले उसने गोद मे उठा लिया है। उसके ऊनी मोजे जगह-जगह उधड गये है, तीनो बच्चो के कपडे साबुत कभी नही रह पाये है। क्या करे, कुछ समझ नही पाता। सारे खर्चे सधे हाथ से करता है, सरकार के बनाये नियमो के अनुसार चलता है फिर भी सरकार द्वारा मिला वेतन पूरा माह नही पकड पाता।

'पापा बॉल।'

'ए, बेटे, हा, वो देखो कितनी बडी पेन्सिल।' किसी पॅन्सिल के विज्ञापन के लिए बनी दो गज लम्बी मोटी-सी पेंसिल है, सामने की दुकान पर टगी है, बिलकुल असली-सी।

'पापा कौन लिखता इससे, बडे आदमी ?'

'हा बेटे।'

'आदमी के हाथ मे ये कैसे आयगी ?'

'और बडे आदमी लिखते हैं।'

'हा।'

'मैं बताऊ भगवान लिखते होंगे, वो बहुत बडे हैं, ऊपर, बादलो मे रहते हैं।

'ओ हा, मैं तो भूल ही गया था,' भगवान क्या लिखता है वह

इसी पर सोचने लगता है। सामने एक कबन्ध जैसा भिखारी सीने एलमोनियम का भगौना बजा-बजाकर अजीब-सा स्वर निकाल रहा।

'इस आदमी के हाथ-पैर कट गये हैं पापा ?'

'हा, उधर न देखो बेटे !' वह अन्दर तक सिहर गया है, तरीका है ये, क्या प्रदर्शन है, सरकार कुछ प्रबन्ध नही करती।

'पापा, वो जहाज लेंगे।'

'कौन-सा, वो अच्छा नही है, दूसरा लेंगे।'

'उडने वाला ?'

'हा।'

'पापा....।'

'ऐसा करो बेटे। पैरो-पैरो चलो।'

'पैरो, पैरो।'

'हा ! उसे सडक पर उतारकर कपडो मे पड़े सल ठीक किये।

'पापा ! वो लेंगे बत्तख।' दुकान पर बत्तख, हाथी, खरगो हवाभरे खिलौने धागो मे टगे झूल रहे हैं। वह दुकान तक जाता 'सुनिये, कितने की है ये बत्तख ?

'साढे छै रुपये की।'

'फिर लेंगे बेटे।'

'ले लो न।'

'ना बेटे। फिर लेंगे न।'

'छोटी बत्तख दिखायें क्या साब ?'

वह दो घड़ी सोचता है, पैन्ट की जेब में पड़े तुड़े-मुड़े नोट को हाथ से छूता है, फिर कहता, 'दिखाइये।'

'ये लीजिये।' सेल्समैन ने हवा भर कर दी है।

'ये कितने की है जी?'

'साढे चार।'

'हूं, ठीक है जी।' वह दुकान पर टगे झूलते और खिलौनो को देखता है, ठीक है, 'फिर लूंगा जी, चलो बेटे, फिर लेंगे।'

'ना, ये ही लूंगा।'

'अच्छा, शाम को लौटेंगे, तब लेंगे,।'

'नई।'

जिद नही करते अच्छे बच्चे।'

'आप कभी दिलवाते है, बस झूठ बोलते हैं।'

'अच्छा, गुब्बारा लोगे? चलो, गुब्बारा दिलाऊ।' गुब्बारे वाले के पास ले गया है, वहां छोटे बडे कई तरह के गुब्बारे चमक रहे है। धागो मे कुछ गुब्बारो के बन्दर लटक रहे है।

'पापा, ये लेंगे बन्दर।'

'कितने का है, भाई?'

'जी। बीस पैसे का।'

'और वो गुब्बारा।'

'दस का जी।'

'गुब्बारा ले लो बेटे, ये बन्दर है न, ये भी अलग-अलग खुल के

छोटे-छोटे गुब्बारे हो जायेंगे हा, गुब्बारा ले लें।'

'नई लूगा ।'

'जिद्दी हो मनु ।'

'नई लेता कुछ भी ।' इस बार मनु का स्वर प्रखर है। उसने जेब मे पडे उस तुडे मुडे दो के नोट को निकाला है, एक गुब्बारा दे दो भाई।

'खुल्ले दो जी ।'

'भाई है नही खुल्ले ।'

गुब्बारे वाले ने कडुवी शकल बनाई है, कौन-सा दू ये लालवाला, और स्वीकृति पाकर गुब्बारा और शेष पैसे दे दिए है।

'ये ले मन्नु ।'

'नई चाहिये। उसे खीभ और खिसियाहट हुई है अपने पर भी, मनु पर भी। किसको समझाये ? मनु को गोद मे उठा लिया है, राजा मुन्ना है न मनु। ले लो।'

'नई लू गा। फैंक दूगा।'

'अच्छा सुनो, देखो, बेटे बाजार मे तो बहुत सी चीजें होती है, पर सारी अपन की खरीदने की थोडी होती हैं, कुछ अपनी होती है अपन उन्हे लेते हैं। कुछ दूसरे लोगो की खरीदने की होती हैं, अपन उन्हे देखते है। अब देखो, वो देखो, वो जो दो औरतें जा रही हैं न, वे कित्ती सुदर हैं मनु की मम्मी से भी सुन्दर और गोरी है न। अब अगर मनु के पापा कहें, हम तो इन्ह घर ले जायेंगे, मनु की मम्मी बनायेंगे तो।— तो पता है क्या होगा, अपनी कपालक्रिया कर दी जायगी, एक भी बाल नही बचेगा सर पर, न अपन उन्ह घर रख सकते हैं। अब यो जो बतख थी न वह तो वे बच्चे लेते हैं, ऐ...., ऐ वो देखो ऐसे वो जो कार म

घूमते हैं। अपने यहां तो दो दिन में वत्तख पुस्स हो जाती, अपने यहाँ तो काठ के, मिट्टी के खिलौने आते हैं— टूटते ही नहीं, खूब खेलो, बस, रंग उतरते हैं, उतर जाय, खिलौने तो रहते हैं।' कहकर उसे लगता है, कहीं किसी जगह काम में जुटी पत्नी का चेहरा सामने आ गया है और कहते-कहते कहीं उसका स्वर ही धुएं-धुएं से गीले गले से निकला है। चलते-चलते सामने ऑफिस आ गया है।

अन्दर हाडा, सक्सेना, उपाध्याय, मनोहर सिंह, दौलतराय, ईश्वरचन्द्र, ओम, के० विजय, सुरेश कुमार सभी आ गये हैं और अपनी अपनी सीट्स पर व्यस्त हैं। वह घड़ी देखता है, पौने बारह का समय है।

'हेल्लो डियर, अमा आज तो विद फैमिली आया है, कहो छब्बे, क्या नाम है?' सरदार हरविन्दर है, उसके आते ही एक शोर जरूर मचता है, 'ओमा, क्या नाम है, ये गुब्बारा तो हम लेंगे।'

'अबे ओये सरदार। क्यों बच्चे को तंग करता है? यहां आओ बेटे कन्नू। आओ हम तुम्हें मुर्गा बनाकर दिखायेंगे।' मनोहर ने बुलाया है।

'बैठना बेटे। ये गुब्बारा लो, मैं अभी आया।' आवाजों के बीच कनु चुप है, गुब्बारा पकड़कर सर नीचा करके बैठ गया है। वह सीधा पहले बाथरूम गया है, फिर सीट पर आकर दोनों हाथ तेजी से रगड़ता बैठ गया है।

'श्शी ऽऽ! साब आ रहे हैं।'

काला कोट पहने, सिगार दबाये, चश्मा पोंछते, मावलकर केबिन से निकले हैं और सभी लोग अपनी सीटस पर गम्भीर हो गये हैं। वे सबसे पहले आकर हरविन्दर की सीट पर रुके हैं, दो घड़ी उसे देखा है।

'गुडमार्निंग सर।'

'नो डाउट, इट इज गुड, व्हट इज इट मार्निंग?' वे पलटकर

घडी मे देखते हैं। उसने एक-एक करके वारह आवाजें दी हैं। सभी ने घडी देखी है फिर सब काम मे लग गये हैं।

'साव ! उसकी सुबह इसी वक्त होती है।' ईश्वरचन्द्र ने कहा है, हल्की हसी हुयी है। मावलकर ने कनु को वडी उपेक्षित नजरों से देखा है, उसके हाथ के गुब्बारे को देखा है, गुब्बारा सहसा फूट गया है और वह सहम गया है।

'मिस्टर विनोद जायस ! वो केस पूरा कर लिया क्या आपने ?'

'जी, कर रहा हू ... ।'

'आज किस वक्त आये थे आप ... ?'

'आधे दिन की छुट्टी पर हू ..., काम था ..., छुट्टी की एप्लीकेशन बडे बाबू को दे दी है।'

'और वो दिसम्बर की फाइल.... ?'

'जी, उसे भी देखना है।'

'ये केयरलेसनेस है .. कितनी बार ... ।'

'मैंने आपसे पहले भी कहा था, आपसे ही नहीं आपसे पहले मिस्टर बनरजी को भी लिखकर दिया था, मेरी सीट पर काम बहुत है सब जानते हैं, ओवरटाइम भी करता हू, घर भी ले जाता हू, जबकि ओवरटाइम का कुछ मिलता भी नही है मुझे।'

'धार देखिये, घर या ओवरटाइम -इफ यू पीपुल वर्क आनिस्टली ।'

'सर ! आय नेवर हैव बीन डिसआनेस्ट।' उसका स्वर तो मद्धिम है, पर आखो मे और शब्द उच्चारण के ढग मे आवेश आ गया है।

'तुम कोई काम समय पर नही करना चाहते और ईमानदारी का, काम से दबे रहने का, नाटक करते हो।'

'इट इज रीयली वेरी सैड सर ।.... मेरा दवना आपको नाटक लगता है । मिस्टर कोटवानी रोज लेट आते हैं, समय दस का पडा होता है, उसकी टेबुल का काम अक्सर मिस्टर झा पर थोपा जाता है,.... यू विल एक्सक्यूज मी सर ! इफ यू आर नाट सेटिसफायड, यू केन ट्रासफर मी ।'

'व्हाट आय हैव टू डु, हू आर यू टु सज्जेस्ट मी,...आय नो, हाउ टु सेट दि थिंग्स राइट ।'

मावलकर साहब के स्वरो मे प्रखरता है, वे [illegible] हैं । कनु जोर से रोने लगा है ।

'क्यो रो रहा है रे तू ?

'यार ! बच्चे को क्यो डाट रहे हो ?' सुरेन्द्र हैं, [illegible] अपने पास ले गये हैं, कुर्सी पर बिठाया है ।

वह कुर्सी पर बैठ गया है सोचता है, [illegible] है, आनेस्टली काम करता है, यहा भी पूरता है, जब [illegible] है [illegible] नहीं होता तो घर भी ले जाता है तिस पर भी वे [illegible] कर ही बात करते हैं । उसने कई बार सिर पर [illegible] है, [illegible] है, फिर फाइल खोलकर पेपर पलटता रहता है । [illegible] वाले से मिले बाकी पैसे को जेब में [illegible] है ।

'साब, आपको साहब [illegible] है, [illegible] ।

वह गया है, और एक [illegible] है । कई और [illegible] सीट्स पर आ गये हैं, 'आय [illegible], सर, [illegible] ही फेल ...।'

हरविन्दर ने [illegible] — [illegible] आय हैव रिटेन टू..., [illegible] थाइ टुमारो....।'

'यार, ये जबसे ये आया है, मावलवर ये ही करता रहता है, इसकी कुर्सी जैसे पिछले साहबों से एक फीट ऊंची है, यू स्टुडन्ट वोटर, हम लोग केस यूनियन मे रखेंगे जोषी के पास।' के० विजय है, आवेश म है।

'उससे क्या होगा यार ? वो भी इन्ही मे से एक है, इन्ही का आदमी है, तभी तो जीत पाया था वह, फिर भी दूगा जवाब, देखू नौकरी से निकाल देगा क्या, मैं जवाब लिखकर कापी लगाकर एक कापी सेक्शन इन्चार्ज के पास भेजू गा।'

'वो तो करना ही, पर अपन एक बार चलेंगे तो शाम को एक बार मिस्टर जोषी के घर।'

हरविन्दर बनू के लिये चाय चाय बिस्कुट ले आया है, 'लो पियो बादशाह ! ऐसे लटके तो जिन्दगी मे बेशुमार हैं, अभा इनसे क्या डरना, गुब्बारा और लायेंगे, फोये करना ! देखना, बाहर कोई गुब्बारे-वाला हो तो ..।'

वह चिट्ठी लेकर जेब मे रखता है और आफिस फाइल लेकर आकडे जोडने बैठ जाता है। लगता है बार बार गलत हो जाते हैं, ठीक नही जुडते, वह ड्राअर से दूसरा कागज निकालता है और लिखने लगता है। फिफ्टी नाइन पाइन्ट टू परसेन्ट, इन्टू, हैड आफ दि डिपार्टमेन्ट, अपान, सेकेण्ड क्लास एम० ए०, प्लस बी० एड०, रैस्ट नो रिजल्ट, एगेन केरीड एम्प्लायमेंट एक्सचेंज, फाउन्ड ए क्लेरीकल जोब, ए सेटेल्ड मैरिज, वन बिजी वाइफ, थ्री चिल्ड्रेन सपोर्टेड बाई एन एलेक्टेड एडमिनिस्ट्रेशन, रैस्ट ए सफोकेटेड हाउस, सिलवर फिश एम्बीशन्स, अपान ए टायर्ड हाउस मास्टर। ये सख्या, ये सख्या किसी से कटती नही है। न डिग्री से न सर्विस से, न सोचने से, न न सोचने से। ये सवाल, जोड गलत है कही न कही जरूर। वह सारे आकडे फिर से देखता रहता है, फिर कुर्सी प सिर टिका कर बैठ रहता है। लगता है, उसे भूख लग आई है। घड़ देखता है, पाच बजने को है। सब लोग अपनी अपनी मेज समेट रहे

[उ

वह भी उठता है।

सुरेश कुमार, हरबिन्दर, दौलतराय, मनोहर सिंह सभी एक साथ बाहर आये हैं।

'साइकिल नही लाये आज ?' ईश्वरचन्द्र है।

'ना यार, खराब हो गई।'

'आओ बेटे। हमारे साथ चलोगे घर ? सायकल से इसे पहले छोडता जाऊं घर, कहो तो– या पापा के साथ आओगे ?'

'जाओगे कनु ?' वह सिमट गया है, 'नही जायगा, रहने दो, मैं साथ ले आऊंगा।'

'अच्छा, गुड नाइट।'

'गुड नाइट अंकल।'

'गुड नाइट बेटे।'

कनु के गुड नाइट बोलने से वह कुछ हलका हुआ है, चलो अपन केले या अमरूद लेंगे।

'केले– अमरूद।'

'हां।'

फलवाले की दुकान पर, सेव, अनार, मोसम्मी, केले सब सजे रक्खे हैं।

'अमरूद कैसे दिए है ?'

'रुपये किलो बाबूजी, इलाहबादी हैं।'

'और केले ?'

'रुपये के बारह, चित्तीदार हैं।'

'पापा जी, वो क्या है ?'

'वो, वो सेव हैं बेटे।'

'नई, वो जो मुकुटवाले गोल-गोल, लाल जो हैं ?'

'वो, वो..., वो अनार हैं।'

हम लेंगे वो।'

'ना ! बेटे अपन केले लेंगे, दे देना भाई एक दर्जन।'

'अनार ले लीजिये सस्ते हैं, माषा किलो ?'

'नई भई, बस।'

'हा–हा, पापाजी।' कनु उसके पैरो से लिपटा है।

'नई बेटे। केले लिये न अपन ने, सवेरे क्या बताया था हमने, अपनी चीज लेते हैं, है न।'

'नई।'

'अच्छा देखो, हरविन्दर अंकल ने दोपहर को बिस्किट–चाय दिखवाई थी।'

'नई ऽऽ अनार लूंगा।'

'नहीं, वह फिर लेंगे, आओ।' कनु वही अड गया है और सडक पर पैर अडाने लगा है। केले सभालकर उसे गोद मे उठाया है तो वह फिसल गया है और सडक पर बैठ गया है। उसे पता नही क्यो, फिर होश-सा गायब हुआ है और तडातड तडातड तीन चार थप्पड कनु के गालो पर जड दिये हैं उसने। कनु ने हाथ रखकर चेहरा बचाना चाहा

है तो हाथ हटाकर फिर दो थप्पड दिये हैं, झटका देकर धकेल दिया है, "चाहिये अनार ? ले अनार बत्तमीज।'

"अरे–अरे क्या करते हैं साव। बच्चे को कैसे मार रहे हैं, ऐसे मारते है क्या, साव ! वो देखिये, ओठ से खून निकल आया है..., वाह साब। हद है. कमाल है उठाइये न।' कई लोग आस–पास आ गये हैं।

वह चुपचाप गोद मे आ गया है। रूमाल से उसका ओठ पोछा है तो लार और खून से सन गया है रूमाल जेब मे रख लिया है। हाथ सर से लगाकर उसे कधे से लगा लिया है। वह अभी भी सुबक रहा है।

'ले, गुब्बारा लेगा, लो गुब्बारा ले लो। गुब्बारेवाले के पास आ गया है वह। यनु कुछ बोला नही है। उसने सर पीछे की ओर कर लिया है।

'अच्छा, लो, बन्दर ले लो बेटे, लेंगे न बेटे।'

उसने पलट कर नही देखा है। उसकी गरदन मे मुह छुपाकर सुबकता रहा है।

'अच्छा घर चल कर ले लेना, ऐ, ये हमारे हाथ मे है।' केलो का खोचा सभालकर वह टेम्पू मे आकर बैठ गया है, 'यहा बैठोगे गेट के पास ?'

कनु फिर कुछ बोला नही है बस, उसके गले मे बाहें डाल दी है, उसके चेहरे पर से आसुओ का भीगापन अभी दूर नही हुआ है।

'अच्छा, गोद मे ही रहो।' उसने थपथपाया।

टेम्पू मे भीड बढ गई है। वह खिसक कर पीछे कोने मे बैठ गया है।

स्टैंड आ गया है। सब लोग उतरे हैं, वह सभल के उतरता है,

घर आकर दरवाजा खुला है।

'आ गये। घूम आये कनु। क्या लाये, देखू?' वह पास आ गई है शायद बर्तन माज कर आ रही थी, हाथो मे कालिख लगी है। चेहरे पर अजीब सूखापन है, हसी, तो अब गालो मे गड्ढे नही पडे, कई लकीरें पड गई हैं।

'क्या बर्तन धो रही थी?'

हा क्यो? अरे ये इसका ओंठ सूज गया, और क्या रोया था क्या आपने मारा था क्या?' कनु फिर जोर से रोकर कनखियो से उसे देखता है। वह सिसकता हुआ मा से लिपट गया है।

'क्या हुआ बेटे? क्यो जी, क्या हुआ, मारा था ?'

हू ।'

क्यो?'

• सुनो, वो अपनी पोस्टआफिस की हिसाब की किताब तो लाना।'

अच्छा लाती हू।

उसने केला छीलकर कनु को दिया है, डिम्पल और किट्टी भी आ गये हैं, एक एक केला उन्हें भी दिया है। हाथ धोकर, बडा बक्स खोलकर उसकी पत्नी ने उसे हिसाब की किताब लाकर दी है। वह किताब खोलता है सारी भरी हुयी है लास्ट पेज पर जहा टोटल बेलेंस निका है, सफेद रोशनी से चमकदार छोटी-छोटी मछली जैसे कीडे घूम रहे हैं टोटल की संख्या जहा लिखी थी वह जगह उन्होंने खानी है। किता झाडकर वह रुपये निकालने वाली डेस्क पढ़ना रहता है। कुछ भी सा दिखाई नहीं पडता।

'कहीं कुछ गलत है जरूर।'

[च

'क्या कुछ कह रहे थे क्या ?'

'ऊ... , नही ।' वह चुपचाप देखता रहता है, फिर बाहर चबूतरे पर जाकर खडा हो जाता है — मोहल्ले मे जो सबसे ऊंची तिमंजिली बिल्डिंग है धूप बस, उसी की दीवारो पर रह गई है, बाकी सब गली धुएं और कोहरे से भरी है ।

□ 'प्रगतिशील समाज'

उग्रह

भुवन को आये आज तीसरा दिन हो गया था। बहुत प्रयत्न करने पर भी आज आफिस से सीधे घर नहीं लौट सकी थी। मिस्टर मेहरा के लड़के का बर्थडे था। उसेही क्यो करीब पूरे पचास साथी उसी के अण्डर थे अत अनिच्छा होने पर भी सभी साथ जाने को बाध्य थ। मिसेज शर्मा के साथ पहले वह कनाट प्लेस आई थी। प्रेजेन्टस भी देख सुनकर लेन होते हैं मित्र के यहा अगल तरह के, पडौसी के यहा अलग तरह के और कलीग के यहा अलग तरह के। और लोग अधिक चतुर थे पहले से ही साथ लाये थे वह नही ला पाई थी। वास्तव मे वह यह सोच रही थी कि मेहरा साहब के यहा नही जाना है भुवन को उसके यहा दो दिन बीत गये अन्यथा भी ले सकता है, आज शाम को जल्दी लौट लेगी। यह हो नही सका लेकिन मेहरा साहब ने लच आवर्स मे बुलवा लिया और कह दिया कि शाम को जो फक्शन हो रहा है उसमे

जगमोहन का वह गीत उसे गाना ही है और उसका क्षमा मागना, कहना कि वह स्वस्थ नही है, सर दर्द है, गला ठीक नही है काम नही आया। तब बहाना करके दो घटे की छुट्टी लेकर आई थी। सारा सरवस छान मारा था। समस्या ये नही थी कि प्रेजेन्ट लेनी थी वरन् ये थी कि वह वेबी को रुचे या न रुचे वह बाद मे मिस्टर मेहरा के क्या काम आ सकेगी, समस्या यह थी। सभी लोग यही सोचकर ऐसी ही वस्तुयें लाये थे, पेन, थर्मस, वार्नविटा या इन्क्रोमिन या लेमनसेट अथवा टी सेट उसे कुछ समझ नही आया था तब उसने स्टीलफ्रेम ले लिया था, फोटो स्टील फ्रेम, उनके एलबम मे लगे एक चित्र की उसने प्रशसा कर दी थी तबसे अक्सर वे उसी सूट मे आते थे, चेहरे का वही एगिल देकर उससे बात करते थे। कई बार कहते स्टीलफ्रेम लाऊंगा, वैसे फोटो तो बहुत हैं पर ये उनकी चॉइस का है और फ्रेम खाली न लगे इसलिये उसने एक परिवर्तन होने के समय तक के लिये कागडा-शैली का एक चित्र रवीन्द्र भवन से लेकर उसमे लगा दिया था यो भी ये कलात्मक बात बन गई थी।

फक्शन देर तक चला और फर्माइश बढने पर उसे कई गाने गाने पड़े, बस का समय निकल गया और शरीर तथा मन से कल की तरह फिर थक गयी थी।

स्कूटर ठीक दरवाजे के पास रुका। भुवन अकेला बैठा कुछ पढ रहा था मीनू और पिन्टू अन्दर थे। उनके हसने की आवाजें आ रही थी। दो घड़ी भुवन के पास ठिठकी उसने भी देखा देखने से लगा शायद कुछ कहेगा पर कुछ कहा नही अन्दर चली गई। ये कुक यहा भली मिल गई है समय से आ जाती है-- खाना, घर, सब ठीक से देख लेती है दिन मे लडके को छोड जाती है। खाने कपड़े पर ही वह भी रहा ही आता है बाद मे न होगा तो लडके को भी स्वय बाधकर रख ही लेगी। बच्चो को घेरे रहता है अन्यथा ऐसे भी मीनू जाती है सुबह आठ बजे-- लौटती है दो बजे-- वह खुद आती है नौ बजे लौटना कुछ निश्चित नही। पाच बजे, छः बजे और ये, ये जाते हैं ग्यारह बजे वापसी का लौटना कोई

लौटना नही फर्म तुरन्त बुला ले, तुरन्त जाय, रात ग्यारह बजे बुलाले तो जाना पडे। आर्टिस्ट का जॉब, विजुअलाइजर का, और आदत भी, दो विसगत स्थितिया।

मेज पर मग मे ब्रश गल रहे हैं, पानी मे यो ही रक्खे छोड गये हैं। कोई अधूरा लेआउट पडा है। लगता है फिर ऊपर वाली मजिल पर चले गये है मिसेज बी, ३२६ के यहा और इन ब्रशेज के बाल पानी मे डूबे रहने से मग मे से टेढे निकलेंगे तो चिल्लायेंगे, कोई और देख नही सकता था, पर देखते क्यो, सारे घर को बहस तो मुझसे है, लावारिस सिर्फ मेरी चीजें हैं, वैसे यह चिल्लाना पहले से अब बहुत घट गया है।

ब्रजेश निकाल कर रक्खे। अन्दर किचन मे मीनू कुक के साथ प्याज कटवा रही है और पिन्टू मसालो के डिब्बे उठा-उठाकर जगह अदल-बदल कर रहा है।

'कम्मो! तुमने ये गैस आज भी नही पोछी और देखो ये सारी क्रॉकरी अभी तक जमीन पर ही पडी है, कौन, कोई लोग आये थे क्या?'

'जी हा साहब के कुछ दोस्त आये थे, उनके लिये चाय बनी थी।'

लाइट आन की, किचेन मे ये १५ वाट का वल्ब रहता वाकई कम है चीजें धुधली दिखाई देती है। फिर भी करीने से सफेद प्लेन दीवार पर हिन्डेलियम-पैसेज से सजा टगा लेमनसैट उसे प्यारा लगा। छोटी सी जाली की एलमिरा उस पर ऊपर टगी फ्रूट बॉस्केट, और उसमे रक्खे टमाटर, प्याज, छोटे-छोटे, सफेद गोभी, हरी मिर्च और दाहिने हाथ की दीवार मे ही मर्ज इलेक्ट्रिक स्विच। उसके ठीक बगल मे लगा मिरर, मिरर के नीचे वाश बेसिन और उसी के पास टगी रोंएदार डार्करेड मिनी टावेल, गैस स्टोव वैसे पर सजे रथ मे प्लास्टिक के डिब्बे कुछ रवे ये भी हैं, सब दाल, चावल, शुगर वगैरह से भरे, नजर भर कर देखा और सन्तुष्ट होकर वापस लौट आई कुछ थकान कम हो गई थी। किचेन के साथ ही यह बैडरूम लगा है। बैडरूम कमर्शानिग रूम,

बहुत बड़ा नहीं है न सही। लाइट ग्रान की तो कमरा चमक गया। काफी कलर की बड़ी सी एलमिराज, तीन पलग। एलमिराज के पास जो खाली कोर्नर बचता था वहीं बाक्सेज लगे हैं उपर से स्ट्रानेट टाग दी है और उस नेट पर मनीप्लाट श्रीपर इतराई सी नीचे तक झूल आई है।

मन ही मन फिर थोडी खीझ हो आई अब देखो ये पोस्टरकलर्स खुले, पडे छोड दिये हैं बानर टेबल पर, और बैडशीट्स कैसे मुडी मुडी हो रहे हैं। इनके सामने ही बच्चे ऊधम करते रह होगे और इन्होने कुछ न कहा होगा। बैडशीट्स झटक कर ठीक किये, अरे ! ये देखो मंजेन्टा शैड की लिपिस्टिक नीचे छिटक कर गिर गई। गोडरेज एलमिराज के पास ही 'क्यूपिड ड्रेसिंग टेबल' रखी है कामदार है सारी की सारी, इसमे फिक्स ये जापानी मिरर कहीं अब ढूढने से भी न मिलेगा पर ये है कि कभी पहले, दो घडी पहले आ जाय तो ये नहीं कहेगे कि थोडा घर देखलें कम्मो से कहकर थोडा ठीक करादें ड्रावर्स खोलकर बाकी सब चीजें देखी जो डर था वह दूर हो गया। ये तो सब कुछ सोचते नहीं एक दिन बच्चे लड रहे थे कि घोडो वाली डिब्बी हम लेंगे कि हम लेंगे, मुश्किल से मीनू से छोटी पिंटू को डाटा। फिर ये तीन डिब्बिया इसमे पडी थी– है तो सुरक्षित, पर इन खाली डिब्बियो को फेकने मैं ले जाऊ क्या, फेंकते हुए कोई देखले तो क्या सोचे। छि !

'अरे कम्मो ऽ ऽ !'

'जी आई।'

'देखना वो बाबू जो अपने यहा आये हैं क्या कर रहे है देख उनसे कहना कहीं जायेंगे नहो, अभी नाश्ता तैयार हो रहा है, कहना मैंने कहा है, और देखो तुम पोहे तैयार करना, फिर कॉफी, कॉफी ठीक से फेंटना।

'जी अच्छा।'

बाल फिर से खोले, एलमिरा में से साधुआना रंग की साडी निकाली। ढीली चोटी छोड़कर चेहरा हल्के से धोया, आई ब्रो ठीक की ओठ भी ठीक किये। पहले वाला रंग छुडाकर इस बार नारंगी रंग से मोटे ओठो की ड्राइंग करने में थोडी दिक्कत हुयी, समय लग गया था किचेन में से काफी फेंटने की आवाज आ रही थी। एक बार फिर उसने सारा कमरा देखा, इधर इन वॉल पर लगे प्रिन्ट्स के फ्रेम थोडे टेढे हो गये है हलके से ठीक किया। दूसरे कमरे में आकर बीच का दरवाजा खोला तो देखा भुवन अभी भी चश्मा लगाये बैठा कुछ पढ रहा है। कमरे मे वही उदयपुरी लेम्प की ठीक-ठीक सी रोशनी है, सॉफ्ट सी जो कमरे को और धुधला कर रही है।

'अरे लाइट नही आन की आपने ? क्यो, और चश्मा लगाकर पढ रहे हैं दिख रहा था आपको'? ट्यूब लाइट आन की तो उसके खुद के दात चमक उठे। दीवार पर लगे हुसैन और पिकासो के चित्रो की जैसे किसी ने धूल झाड दी हो। सेन्टर टेबिल पर फेमिना और इलेस्ट्रेटेड-वीकली पडे है वह पास के सोफे पर बैठ गई और दाहिने हाथ की सजी हुयी ऊगली से बार-बार कर्णफूल पर और पीछे के बालो में उगली घुमाती रही।

'कब से अकेले बैठे है।'

'क्यो ?'

'आप भी बस .., वे कब चले गये, यहा बैठे नही क्या, मुझे तो देर हो आई भुवन ! आज मिस्टर मेहरा के यहा फक्शन था। मिस्टर मेहरा मेरे इमीडिएट बॉस हैं, उन्ही के कारण मेरा प्रमोशन हो सका, हालाकि सीनियरिटी से, मेरा मतलब है सीनियरिटी से मेरा नबर बहुत देर से आता, पर मैं मैरिट बेसिस पर आगे बढ सकी' दो पाय टू लेबर्ड मोर देन माई लिमिट्स, बट, स्टिल क्रेडिट गोज टू हिम।' भुवन ने उतारकर अपना चश्मा पोछा और फिर से उसे देखा है, फिर उठकर बुकरेक में से कुछ पुस्तकें निकाल ली देखी है, कुछ विवेकानन्द की

स्पीचेज हैं और दूसरी दो ये खलीलजिब्रान की अनुभूतियां हैं 'दि प्राफिट' और दूसरी ये 'कोहरे के नाम' मिट्टी की एक मुलायम पर्त उनके सफेद अंशों पर जम गई है।

'अपफू ऽऽ पफू।'

'कितना ही पोंछिये यहां धूल उड़ती ही कुछ ज्यादा है।'

भुवन चुपचाप और पुस्तकों के नाम पढ़ता रहता है। रैक पर काले पत्थर की एक यक्षिणी की भारतीय परम्परागत शैली की निर्वस्त्र मूर्ति रखी है उसके उभरे हुए अंगों पर भी धूल की पर्त पड़ी हुयी है। छोटी सी कलात्मक मूर्ति है उसकी दृष्टि हटती नहीं है। पास ही फ्लावर पाट रखा है ट्रांसपेरेन्ट ग्लास का पहलूदार। सफेद नरगिस का लम्बा सा फूल लगा है। शीशे में से उसकी डंडिया कई-कई होकर दिख रही हैं। वहीं स्टील फ्रेम में दो फोटो अलग-अलग कसे रखे हैं। एक मिस्टर माथुर का है दीप्ति के पति का कोई उन्हें कुछ प्रमाण पत्र जैसा दे रहे हैं और वे सर झुकाकर ले रहे हैं, कोई मन्त्री महोदय हैं, वह फोटो उठाकर दीप्ति की ओर देखता है।

'ये उन्हें अकादमी की ओर से इन्हीं की एक पेन्टिंग पर एवार्ड मिला था। सिक्सटी सेवन में, अब तो काम ही नहीं करते थे, बस आफिस जायेंगे . . एक तो इनके आफिस का कोई समय नहीं।'

'समय नहीं।'

भुवन ने वह फ्रेम रख दिया है और दूसरा उठाकर उसकी ओर पलटकर देखा है।

'हां-आ, यों तो समय है पर कामर्शियल एडवरटाइजिंग फर्म, फिर कभी भी बुलवा लेते हैं।'

भुवन ने जेब से रुमाल निकाल कर फोटो पोंछा है फिर गौर से देखा है दीप्ति बड़े मेकअप में हैं साथ में सटकर खड़े हुए कोई अधेड़

सी आयु के व्यक्ति हैं, हाथ में कत्थई रंग की सिगरेट लिये बड़े विश्वास के साथ खड़े पीछे कुछ और भी धुंधले चेहरे हैं देखता रहा आया हूँ रखने के बाद भी उसकी दृष्टि हट नहीं पाई है।

पास ही फिलिप्स का रेडियोग्राम रखा है और दीवार पर पास ही एयर-इन्डिया का कैलेण्डर टंगा है बेंद्रे की पेन्टिंग ऊपर लगी है एक नीली लड़की संगीत में तल्लीन है, उसने पलट कर रेडियो ग्राम पर रखे रेकार्ड पर से यों ही, गीतकार का नाम पढ़ा है और फिर दीप्ति को देखने लगा है, वह प्रसन्न है।

'ये रेडियोग्राम उसी फंक्शन की देन है भुवन, वो जो रंगीन फोटो देखा न अभी, उसी का।

मेहरा साहब ने कल्चुरल प्रोग्राम अर्गनाइज किया था, ओह। ही इज फुल आफ लाइफ काफी टिकेट्स सेल हुए। अच्छी इनकम हुयी थी *उसी में से मुझे ये मिला। ये, जो जो मेरे पास खड़े हैं वे ही हैं मेहरा* साहब।'

भुवन दीवार पर इस ओर फ्रेंड और अन्य प्रिंट्स को देखने में संलग्न हो गया है गहरे रंग की पृष्ठभूमि पर कुछ उड़ते हुए पक्षियों की आकृतियां ठीक वैसी ही सरल हैं जैसी बचपन में बनाते थे। चित्र के नीचे बहुत छोटे टाइप में आर्टिस्ट का नाम लिखा है वह झुक कर पढ़ता है जुआमीरो, फिर हटकर सीधा खड़ा होकर चित्र को जैसे अनुभव करता है।

'ये भी मेहरा साहब ने मेरे जन्म दिन पर दिया था शायद किसी फ्रांसीसी आर्टिस्ट की पेन्टिंग है यहां तो मिलेगा भी नहीं ये प्रिंट।'

भुवन देर तक दीप्ति का चेहरा देखता रहा, मेकअप का सेन्स खूब अच्छा आ गया है।

'और इनकी वह अवार्डेड पेन्टिंग ?'

'इनको....किनको ?'

'तुम्हारे इन की, मिस्टर माथुर की।' वह किंचित मुस्कराया है।

'दे आये होगे किसी फ्रेंड को या फिर वही पेंटिंग्स बाक्स में बन्द करके रख छोड़ी होगी।'

'नाश्ता चीजें ?'

'हां रखदे।' मेज पर से पेपर्स और मेगजीन्स हटाई हैं चीजें रखी गई हैं।

'तू जा कॉफी लेआ और सुन पिन्टू और मीनू ... ।'

'जी पिन्टू को तो साहब ने बुलवा लिया है अभी, फिल्म लिवा गये हैं।'

'क्यों अभी तो... , तुम्हें कैसे मालूम।'

'पिन्टू से ही कहलवा दिया था कहना हम देर से आयेंगे, और डिनर लेकर आयेंगे।'

'और मीनू ?'

'वे तो आपने कल जो पेपर्स दिए थे कुछ, उन्हें डायरी में उतार रही है।'

'ठीक है। आप लीजिये भुवन बाबू ये, तू काफी लेआ जा जल्दी।' उसने गुलाबी चटनी डालकर पोहे की प्लेट दी है गुड भी लिये ।

काफी पी गई।

'आपको इन्होंने ये फ्लेट पूरा दिखाया नहीं, न दिखाया होगा, क्यों न मम्मी ?'

'जी नहीं, दोपहर को आये थे तो मेरी लाइफ स्टडी लेयर वँट गये, थोड़ा सा काम किया, बस दो सिटिंग ली थी तब चन्द्रा बाबू आये थे वे लिवा ले गये।'

'ठीक है, मैं दिखाती हूँ आइये।'

पीछे की ओर छोटा-सा लान है गुल मेंहदी और डेलिया की कतार खड़ी है, चुप, इधर की ट्यूबलाइट ऑन की।

'क्या , कौन है?'

मैं हूँ मीनू, मम्मी और काली है।

'अच्छा। ये ही है काली, कालीचरण दास बम्मो का लड़का है, आफ आवर्स में ये घर पर रहा आता है। पिन्टू की देखभाल भी रही आती है, और छोटा था, तब तो यहां है एक 'यशोदा-नर्सिंग होम,' एक मिस्टर खन्ना का वहां छोड़ जाती थी साठ रुपये लेते थे वे लोग, पर अब वह बड़ा भी हो गया है .., और एक्चुअली भुवन, वी कान्ट एफोर्ड इट, सो इसे रख लिया। एक लाल डेलिया तोड़कर उसने बालों में खोंस लिया है, अ़ गारे सा।'

मीनू और काली अन्दर चले गये है हंसी दबाते खुश होते। वह बरांडे और लॉन से निकलकर बाहर देखता रहता है, तीन मंजिली, ब्रॅकेट टाइप कॉलोनीज में बत्तियां जल गई है और सड़क बहुत सूनी पड़ी है। दूर के चौराहे पर कुछ आकृतियां इकट्ठी है। वह वापस लौट लेता है।

'यहां थोड़ी पीस है भुवन, वर्ना जहां पहले रहते थे पुरानी दिल्ली में ओफ्फ कह नहीं सकती एक जगह है नये-बास, क्या गन्दी गली थी सारा बाजार मिर्च मसालों का, बच्चों का एक स्कूल पास था बस, ये मीनू उसमें जाती थी, पर वही म्यूनिसिपैलिटी टाइप स्कूल। इनका आफिस जरूर पास था 'नूरजहां पब्लिसिटी ब्यूरो,' बस, और स्टेशन भी पास, आये दिन कोई न कोई आता रहता, हां मकान किराया जरूर कम

था, पर एक तो दूसरी मंजिल पर था, सकरा जीना, और जीने में ही एक मोड पर सडास था– इतनी दुर्गन्ध भरी रहती थी, ओफ्फ अब तो उनके नाम से उबकाई आती है– ऊपर छत पर पीछे से आया एक पीपल का पेड था, वर्षा मे ऐसी भयावनी लगती हवा से उसकी आवाज, और सारे दिन पक्षी बीट करते रहते। सच, वहीं बैठती मिर्च मसाले सुखाती रहती और पीछे मकान के पता नही किस कबाडे की फैक्टरी थी, सारे दिन मोटरो की घर्र-घर्र और लोहा या टीन पीटने की आवाज आती रहती, बस, भला हो इनके मैनेजर का। इनके यहा एक दिन अकस्मात माडेल नही आ पाई, दुर्घटना हो गई कोई, और अरजेंट काम था, इन्हे क्या सूझा, पता नही, किसी ट्रावेल के फर्म की विज्ञापन डिजाइन देनी थी। मुझे ही लिवा ले गये। कई फोटोग्राफ हुए शुरू-शुरू मे तो सब बड़ा अजीब सा लगा था, पर फिर मान लिया कि जीवन का यह भी एक पक्ष है, फिर एक दिन इन्ही के मैनेजर बसु बाबू ने मुझसे गाने के लिये आग्रह किया। उस बार किसी क्रीम के लिये पोज करना था तभी गई थी, बस ये जिद कर बैठे थे शायद गुनगुनाते सुन लिया होगा कभी, फिर गाया मैंने। उन्होंने ही मेहरा साहब से जिकर किया। मेहराजी ने भी गाने सुने। पहले तो उन्होने भी प्रोग्राम्स पर ही बुलाया, जब प्रसन्न हो गये सब सर्विस दी।

अब ये देखो ये बैंड रूम है।' स्विच ऑन किया, जोरो का वस्त्र किसी इंगलिश रेकार्ड की हल्की-हल्की धुन आ रही है, मीनू की हंसी की आवाजें है साथ मे वाली की हसी भी है।

'ये लोग ?'

'हां नाच रहे होंगे– अकेले होते है तो मीनू अक्सर ... के साथ स्टेप्स की प्रेक्टिस करती रहती है, अच्छा है वाली भी ... रहकर मेनर्स सीख जायगा और मीनू का मन लगा रहता है।'

'बीबीजी खाना क्या बनेगा ?'

'ये तो पता नही किस समय आयेंगे, आप ...

लेंगे ?'

'तुम्हे याद है एक दिन प्याज भी तुम्ही ने खाना सिखाया था।'

वह हस पडी। हसी अच्छी थी।

'चम्मो जाओ तुम मैं ले लूगा, जो चाहो तुम, और बीबीजी कहे, बनालो।'

बेडरूम से मीनू और काली के हसने की आवाजें आ रही थी।

'बडी शरीर है पर काम भी खूब करती है, शी इज वेरी इन्टेलीजेन्ट भुवन। उसको मिस कह रही थी शी इज वन्डरफुल ऐट कत्थक एण्ड लाइट क्लासीकल वोकल, सोचती हू इसके लिये कोई ट्यूशन लगवा दू।'

'बीजी खाना लगा दू या साहब का इन्तजार करेंगी ?'

'तू तो कह रही थी वे वहाँ से डिनर लेकर आयेंगे।'

'ओह यस, आयम सारी बीजी! वे फुरसत पाकर ही आवेंगे, तब ठीक है खाना लगाये देती हूं।'

'डाइनिंग टेबल पर बीच मे आज फ्लावर पाट भी सजा है डिनर सैट के हर पीस पर दीप्ति का नाम प्रिंट है।

'तुम्हारी कुक एक्सपर्ट है।'

'थैंक्यू मिस्टर भुवन।!'

'जी।'

'थैंक्स, पर उसके सामने मत कह दीजियेगा, इसी के लिये मैं उसे डेढ सौ रुपये दे रही हू दिल्ली मे मिलती कहा है, अब कभी कभार आ जाय कोई गेस्ट, या कभी मेहरा साहब को ही बुलालू तो या तो मैं

है किचेन मे घुसूं या फिर ग्राप ढंग का खाना नही पा सकते...., ग्रगले वर्ष...., बेबी ऽ ऽ। मीनू ऽ ऽ सो गई क्या ?'

'जी हा ऽ ऽ, ग्राऊंगी नही ग्रब...., यहिये।'

'सो ग्राज की स्लिप्स डायरी मे नोट करदी न ?'

'हा मम्मा, बस दो तीन रह गई हैं सुबह कर दूंगी।'

'हा भूलना मत रानी।'

'नेव्हर मम्मी ..., गुडनाइट, गुडनाइट ग्रंकल।'

'गुडनाइट।'

'ये सॉस ग्रौर लीजिये न।'

'ले लूंगा ग्राप लीजिये, कुछ कह रही थी न ग्राप....ग्रगले वर्ष, क्या।'

'हां ग्राप भी खूब याद रखते हैं कह रही थी ग्रगले वर्ष फ्रिज लेने वाली हूं, ले तो इस वर्ष भी सकती थी पर 'क्राउन' ही ग्रा गई है। व्हाइट एकदम, दूसरे जब चार्ज होती है तो ग्रावाज नहीं करती, मुझे वे लोग भी पसन्द नही जो खाने मे ग्रावाज करते हैं, या खाने के बाद डकार लेते रहते हैं, ये भी खाने मे यदा-कदा आवाज करेंगे या उंगलियों में मसाला लगाये बैठे सोचते रहेंगे।'

,ये.... ?'

'मिस्टर माथुर.... ग्राप तो बस समझते ही नहीं, ग्रब देखिये, इट्स ए प्लेजर टू टेक मील्स विथ यू, न कहीं कुछ गिरा, न कोई ग्रोठ या जबान की ग्रावाज ग्रौर यू फिनिश्ड योर डिनर ग्ररे ! ग्राप तो सचमुच बैठे हैं।'

'ग्राप कह रही थी फ्रिज... ।'

'ओह यस 'ब्राउन-फ्रीज' ही तो मैं रुपया जोड़ रही हूँ बस मेहरा साहब के साथ एक प्रोग्राम और, और बस फिर सब ठीक हो जायगा। कुछ पैसा मैं जोड़ रही हू। बहुत सभाल कर चलना पड़ता है।

हा और क्या, अब देखिये न, ये मीनू को मैं सारे दिन के खर्चे की स्लिप्स दे देती हू ये डायरी मे नोट कर लेती है, तब कल के खर्चे से आज का कम्पेयर करती हू एण्ड नेक्स्ट टाइम आय ट्राय टू एडजस्ट, इफ देयर इज एनी ओवर एक्सपेन्स, दिस इज हाऊ .., अभी मीनू मे थोड़ा लड़कपन है हालांकि वह पूरे चौदह की हो गई, पर ठीक है लेट हर एन्जाय बचपन कौन फिर मिलेगा, कल परसो तो दोनो दिन बहुत लेट आई थी आपसे कुछ बात ही नही कर सकी थी .. डोन्ट यू लाइक टु स्मोक आफ्टर डिनर, मिस्टर मेहरा लेते है। ये बिलकुल नही लेते, बस सौफ मागते रहेगे या पान ले लेगे तम्बाकू पड़ा हुआ। खा आयेंगे 'पान कार्नर हाउस' से, पिन्टू की आदत बिगाड़ रहे हैं उसे भी खिला लायेंगे।'

कम्मो पानी ले आई, हाथ धोये टावेल से पोछे। भुवन कुर्सी छोड़कर पिकासो और हुसैन दोनो की पेन्टिंग्स देखता रहा, चित्रो के नीचे दोनो का परिचय भी लिखा है। पर देर तक देख पाने के बाद भी वह चित्रो के विषय मे किसी निर्णय पर नही पहुँच सका है हा हुसैन के चित्र मे अवश्य कुछ नये नजर आते हैं।

कम्मो इलायची सौफ लेकर खड़ी है, वह ले लेता है। 'सिगरेट ?' कम्मो ने पूछा है, 'नो थैंक्स।' वह पेन्टिग को दोबारा देखकर फिर दीप्ति को देखता है वह भी उसे देख रही है।

'इन प्रिंटस का बड़ा फैशन है भुवन ! मैं ही लाई थी, मेहरा साहब लाये थे उन्होने प्रेजेन्ट किये थे...।'

'मिस्टर माथुर की कोई पेन्टिग फ्रेम नही कराई आपने।'

'ही हिमसेल्फ इज नाट केयर एबाउट हिज पेन्टिग्स। पता है

आपको, मेहरा साहब ने ये प्रिंटस देते समय कहा था कि तुम्हारे हसबैंड ग्राम्प्ट हैं, ही वेन एप्रीशियट देम पर जिस दिन मैं आई थी उस दिन जरूर देखा था थोडी देर बस, फिर महीनो कहती रही फ्रेम करा लाइये पर आखिर फिर मैं ही फ्रेम करवा कर लाई।'

'दीप्ति ! तुम्हे वह याद है शुकर साहब की हवेली ?'

'जाकिर साहब की ?'

'हा, वही जहा हम गुलमोहर के फूलो मे से हाथी ढूढने जाया करते और अच्छी चाची बुलाकर रोज कुछ न कुछ देती थी अच्छन चाचा की बगम . , याद तो है न, जाकिर साहब के छोटे भाई के घर से।'

'हा हा जिनके यहा वह अ ग्रेजी साहब केन फोटोग्राफर आते थे ?'

,हा,'तुम्ह शायद पता नही वह बस— अच्छन चाचा ने अच्छी चाची और केन साहब दोनो को एक दिन गोली स मार दिया।'

'मार दिया ।'

'हा अच्छन चाचा और अच्छी चाची कैरम बहुत अच्छा खेलते थे, केन अ कल ने थाई विदश का बना बहुत खूबसूरत कैरम बोर्ड चाची को प्रेजेन्ट म दिया था उसी तरअच्छन चाचा बाजी हारने लग गए थे। फिर पता नही एक दिन क्या बात हुयी कहते हैं , दूसरे दिन यह खबर फैल गई कि अच्छन चाचा फरार हो गए है। फिर कुछ केस चला भी हो भले ही पर जाकिर साहब की वजह से बच ता गये , लेकिन क्या बचना है अब अकेले म बात करते रहते हैं कभी खुद ही हसते हैं कभी बेहद चुप रहते है— दीप्ति मुझे तो लगा करता है तो भी वह हमसे ज्यादा स्वस्थ है।'

'ऊ ?'

'नहीं क्या ?'

'बुरा हुआ अच्छन चाचा को यो तंग में नहीं आना था। बुरा लगा, खैर यह बताइये ओढ़ने को और कुछ लेंगे या ये कम्बल ही बस, मल ठंड लगी थी क्या। मैं तो बस कुछ दम ही नहीं पा रही हू दो दिन से देर से लौटती हू। ये भी अभी आय नही हे। खैर, आप सोइये या कुछ पढना च हैं तो पढें मैं दलू, तु र को रोर लेती हू वही हेल्पफुल है, र त जागती रहूगी ये आयेंगे तो दरवाजा खोलखाल देगी, मैं तो मरी सी पड़ी कि सोई हो और कोई रजाई . ?'

'काफी है ब।'

मीनू और काली सो गये हैं, उसने दूसरा वेड ठीक किया।

'सुनो ! कम्मो।'

'जी हा।'

'देखो अभी तक माथुर साहब आये नहीं हैं तुम यहीं सो रहो, मैं अभी तो ये मेगजीन देख रही हू अगर सो जाऊ तो लाइट आफ कर देना। तुम ख्याल रखना , और देखो ये कम्बल और गद्दा ले जाओ किचेन में लगालो और जब सोओ तब काली को ले जाना मीनू ठीक से सो नही पायेगी।'

स्लीपिंग गाउन पहनकर बिस्तर में घुसी तो लगा मन भारी है, पहले ऐसा लगा नींद नहीं आयेगी। दूसरे कमरे में झाक कर देखा भुवन कम्बल ओढ़े झुका हुआ डायरी लिख रहा है। वह ड्रेसिंग टेबल पर पड़ी 'स्टार-स्टाल' उठाकर देखती रही और फिर कब नींद आ गई पता नही चला। सुबह जब आख खुली तो पाया ये और भुवन बैठे काफी ले रहे हैं पिन्टू और मीनू को कुक ने तैयार कर दिया है स्कूल जाने वाले है।

'अरे ! रात किस वक्त आये ? और सुबह जग भी गये, कमाल है, मुझे जगाया भी नही।'

'मैं ही कौन जग पाता, पर ये जो तुम्हारी कम्मी है न, उसने

सोने ही नहीं दिया, सुबह से ही खड्ड-बड्ड बर्तनों का माडर्न म्यूजिक, आखिर जगना पड़ा।' माथुर स्मार्ट है।

'ठीक ही हुआ दीप्ति वर्ना मुझसे तो मिस्टर माथुर कुछ बात ही न कर पाते।'

'ये तो आधुनिक जीवन है मिस्टर भुवन, माडर्न लाइफ, यहां सब अपनी-अपनी ही नहीं कह पाते, दूसरों की कौन कहे— सुने, क्यों दीपी! एम आय रोंग, उसने मिरर देखा टाई की नॉट ठीक ही है, बालों पर हाथ फिराकर खुद को आंख मारी है, चलेगा, क्यों दीपी ?'

'गॉड नोज बेटर, आय वान्ट अन्डरस्टेन्ड योर फिलॉसफी।' आफिस के लिये तैयारी में लग गई और जब तैयार होकर लौटी तो पाया ये चले गये हैं भुवन जैसे कहीं जाने को तैयार है। उसने प्रश्न भरी दृष्टि दी है।

'हां ठीक ही देख रही हो, शाम को साढ़े छै की गाड़ी से जाऊंगा अभी तो...., काम से जा रहा हूं।'

'साढ़े नौ की गाड़ी से क्यों नहीं जाते ?'

'एक तो वह पैसेन्जर है दूसरे अक्सर ही लेट हो जाती है, और ऐसा भी क्या है, काफी रह लिया।'

'अच्छा देखो यहां न आई...., न आ पाई तो स्टेशन पहुँचूंगी, वहाँ तो पहुँचूंगी ही।'

'ठीक है, सुविधा हो तो आना अन्यथा सर्दी की शाम।'

'अच्छा ठीक है मैं खुद ही देखूंगी, कम्मो देखना जब साहब कहें खोल दे देना।'

सारा दिन आफिस में फाइलों में डूब गया। मेहरा साहब आज

छुट्टी पर हैं। हर बार ही पता नहीं क्यों टाइप करते समय अच्छन चाचा और अच्छी चाची याद आते रहे केन अकल की शक्ल भी सामने घूमती रही उनकी आखें किसी जगह बनावट मे मेहरा साहब से मेल खाती है, मेहरा साहब की आखें भी कुछ वैसी ही है, नीली। भुवन अभी तक अन्तर्मुखी और मृदुभाषी है, पता नहीं क्या कर रहा है आजकल कुछ कहा नहीं उसने भी। भुतहा पीपल के नीचे वे दोनों ही अक्सर पीपली टक टूटकर खाने रहते अघेरे मे कंपा तो डर लगता था। भुवन ही घर तक छोडने आता था। फिर, फिर जब कालेज मे आ गये थे दोनों तब भी, अक्सर शाम, भुवन घर आता था जाने किन-किन शायरों के शेर याद करके लाता था बाउजी सुनते थे और वह डायरी में लिखा लिया करती थी एक दिन बाऊजी ने वह डायरी देखली थी। उठाकर ले गये थ। रात भर वैसी डरती रही थी क्योंकि उस डायरी मे उन शेरो के अलावा और भी कुछ था , रात भर डरती रही थी, बाउजी वे पेज न पढे, हे भगवान बाऊजी उन पेजो तक न पहुंचे, सो जाय। .. पता नहीं क्या इतने दिन के बाद वैसी ही घबराहट सी उसे आज हो रही थी। लगा जैस उसे पीपल से उतरकर बहुत भूत उसके पास आ बैठे हैं। वह कुछ कहना या गाना चाहती है, या फिर. , पर मिस्टर उपाध्याय, सामने की सीट पर चश्मा चढाये बैठे है कोई लेटर ट्रासलेट कर रहे होंग, फ्रेंच मे या जर्मनी म, मिसेज कुमद टाइप मशीन के रोलर को बार बार तेजी से खिसका रही है, गलत सही पर बहस करते भटनागर, प्रेस रिपोर्टस की फाइल बनाते भारद्वाज सब जैस उस पीपल पर से आकर बैठ गये हैं वह अन्दर तक सिहर गई, किसी तरह समय बीता, बस पकडी घर आई, कोई नहीं था बस मीनू और काली पीछे लान पर रस्सी स कूद रहे थे। सारा घर घूम कर फिर ड्राइग रूम मे लौट आई सोफे पर बैठ गई ऊपर रोशनदान म एक कबूतर बैठा है चुप। नीचे कुछ बिखरे तिनके पडे है फर्श पर।

'अरे ऽ ऽ काली ! ये कूडा किसने किया, मीनू तुम लोग... ।'

'नो अम्मा। हम लोगो ने ये नहीं किया है दिस इज द नेस्ट आफ दिस

सिली वर्ड, ये इसी पर नाच रही थी पर फड़फड़ा रही थी बस गिर गया, अब चुप बैठी है, फुलिश वर्ड ।'

'अच्छा ठीक है जाओ तुम ।'

मीनू स्कीपिंग रोप से कूदती भाग गई है। तिनके सारे कमरे मे हो गये हैं उसे लगता है सारे सर में हलका-हलका दर्द है चाय अब स्टेशन पर ही ली जाय।

'मीनू....ऊ....ऊ.... ! देखो मैं स्टेशन जा रही हूं हो सकता है साढे नौ दस या और देर से लौट पाऊं ।'

'अच्छा अम्मा ।'

स्टेशन पर गाडी छूटने को है। सिगनल भी हो गया है। बार-बार लगा कि जैसे वही जा रही है और गाड़ी छूटी जा रही है। सारी गाडी तेजी से देखती जा रही थी।

'यहा खड़ा हूं मैं ।'

'ओह मैं तो समझती थी....कि.... ।'

'मिलूंगा नही मैं, मिल नही पाऊंगा ।'

'देखो गाड़ी छूटने के समय में अभी कुछ मिनट है, चाय लेलें, कहा बैठे हो ?'

'यही, यहा थो सामने, वो चश्मे वाले सज्जन लेक्चर झाड़ रहे हैं न, वही ।'

'ठीक है।'

'तुम्हारी तबियत कुछ....बहुत थक जाती हूं ।'

'नही बस आज पता नही क्यों मन उखड़ सा गया— आफिस में

कुछ किया नही विशेष, फिर भी..., तुम भी रात सोए नही ठीक से क्या, लगता है, दाहिनी आख कैसी लाल हो रही है।'

'हू ..., रात बडा अजीब स्वप्न देखा दीप्ति !....बहुत सी तसवीरें और फ्रेम टूटे पडे है और लोग, पता नही कौन लोग हैं बडी कीमत दे देकर खरीद रहे है। कोई कह रहा है ये तस्वीरें इनकी है मिस्टर भुवन की, बट द पुअर आर्टिस्ट इज डम्ब, गूंगे है मैं चौक पडा हू, खूब जोर से चिल्ला रहा हू अपनी आवाज मैं तो सुन पा रहा हू पर वे लोग नहीं सुन रहे हैं सुबह सुबह आख खुली देखा मिस्टर माथुर तैयार हैं, तुम सो रही हो सोचा था कहूगा तुमसे यह सब, पर सुबह वक्त ही नही मिला।'

'यू आर स्टिल सेन्टीमेन्टल भुवन, वो जो रात पेंटिंग्ज की बात कर रहे थे न वही सर चढ़ी रही है।'

'हो सकता है।'

'गाडी ने व्हिसिल दी है।'

'तुमने क्यो तकलीफ की मैं तो जा ही रहा हूं।'

गाडी सरकने लगी तो सहसा याद आया यह तो पूछा नहीं यहा कैसे आये थे ... ?, भुवन हलके से मुस्कराया है, तुम्हारा घर देखने आया था। फिर उसकी मुस्कान बुझ गई है।

गाडी तेज हो गई है हिलता हुआ हाथ और चेहरा भीड मे खो गया है पटरिया आगे जाकर 'सी' की तरह मुड गई हैं अब गाडी और खिडकिया रोशनियो के स्क्वायर्स दिख रहे हैं। गाडी खडी हो गई है, कोई कह रहा है किसी ने जजीर खेंच दी है। पर अब वह वहा जा नही सकेगी सब कहना पूछना रह गया ऐसा लग रहा है। वह पीछे मुडकर देखती है, गाडी अ धेरे मे ठहरी खडी है बार-बार व्हिसिल दे रही है।

क्यो आया था भुवन ?

सारा शहर चलती फिरती बुझती जलती रोशनियों में परिवर्तित हो गया है। टेक्सी ली स्टेशन पर कई बार सोचा था कि कोई टेबलेट लेले ये धोखे जैसा दर्द कुछ कम हो, ये तो बस कुछ देखते ही नहीं। फिज आनी है, अब सारा कुछ मैं ही देखू, कितने पैसे हो गये, कितने और पूरने हैं एस० आय० सी० से कितना मिल सकता है सब खैर।

'बस यही रोक दो।'

'सड़क पर ही ?'

'हां।'

'पाच–साठ।'

'क्या बताया ?'

'जी हां पाच साठ।'

'मीटर देखा वहा भी ये ही अक्षर हैं चुपचाप दे दिये पता नहीं कम्मो ब्रेड लाई हो या न ले गई हो, ले लूं, बटर भी ले ही लूं।

ये पाच साठ खल गए– पाच रुपये तब टेक्सी ने ले लिये थे जब आफिस से स्टेशन गई थी कभी–कभी ये ऐसे एक्सपेंसेज एक्स्ट्रा लगने लगते है फिजूल।

हवा ठंडी हो गई है।

बड़ा अंधेरा है, लगता है सारी कालोनी की लाइट ऑफ है। कोशिश करके कलाई पर घड़ी देखो। आठ बजा है लगता है ये अभी आये नहीं है प्लेट यो ही पड़ा है सूना सा, कम्मो भी कहीं गई है क्या ? पास आकर देखा दरवाजा लाक्ड नहीं है, सीढ़ी में द्वादशी के चन्द्रमा की परछाई गिर रही है, रात और ठंडी हो गई है।

दरवाजे पर हाथ रखते-रखते चौंक कर ठहर गई है।

'बस, कन्ज़्यूम्ड, रहने दो बस. इस बार ऐसी इतनी जल्दी, तुम तो बस कभी-कभी...., अच्छा यहां आना कैंडल के पास। मीनू की ही फुसफुसाहट है।'

घत् यही ठीक है।'

'प्लीज कम इन लाइट। फिर मीनू का ही स्वर है वह ऊपर से नीचे तक तप कर झनझना गई है।'

'का ऽ ऽ ली ईं....ई मीनू....ऊ खोलो।'

'जी ईं जी, आया....।'

'मया, कहा हो?'

'आ रहा हूं जी।'

कहां है मीनू?'

'सो गई हैं।'

'तुम?'

'मैं यहीं था अभी-अभी लाइट चली गई है। मम्मा कह गई थीं प्याज काटकर रखना बस आधी काट पाया था कि लाइट चली गई ...। तबसे...., तबसे बैठा हूं।'

रोशनी आ गई है, मीनू कम्बल ओढे आख मूंदे लेटी है।

फर्श पर बिछावन में थिक्स पड़े है। कम्मो किस वक्त गई थी?'

'जी, करीब छै बजे।'

'पिट्टू?'

'जी, साथ ले गई हैं, जिद कर रहा था।'

'और मिस्टर माथुर ?'

'आये थे जी, वे भी साथ गये हैं।'

'ठीक है।'

वह अकेली खड़ी है, खड़ी रह गई है। मीनू के पलंग के पास एक सुनहरी सा कागज नुचा फटा पड़ा है और एक सीली हुई सी गंध कमरे में छाई हुई है। उसे लगता है ज्वर है, और वह तप रही है।

कपड़े बदले और मीनू के पलंग के पास से वे सुनहरी कागज के टुकड़े उठाये हाथ में मसले हैं और कम्बल ओढ़कर लेट गई है। आंखें मूंद लीं तो कुछ राहत मिली है।

'काली ई ई।'

'जी हां यह चुप खड़ा है।'

'जी मेम साब।'

'देख तेरी मां और साब आयें तो कहना मुझे जगालें . , नहीं सुन, जगायें नहीं, और साहब पिट्टू को अपने पास सुलालें, आयम नाट फीलिंग वैल।'

'अच्छा जी।'

उसे लेटते ही लगा कि वह किन्हीं गरम हवाओं के बीच फंसती जा रही है और डूब रही है बार-बार हो कोई पैर, कभी हाथ उससे छू जाता है, फिर जैसे किसी ने कस लिया है, कुछ दिखता नहीं है। कम्बल हटा दिया तो कुछ होश आया, तमाम प्यास लगी है। घड़ी के रेडियम अक्षर चमक रहे हैं नौ बजा है उठकर एक घूंट ठंडा पानी पिया अन्दर तक ठंडक उतरती चली गई। नींद नहीं आ रही है अब।

'मीनू _ मीनू।' कोई उत्तर नहीं है– कमरे में पूरी चुप होकर

रह गई है, आफिस से आकर इन्हे घर नही ठहरना चाहिये क्या। पर यह तो था है। और चाहिये है, वह तो है नही।

'काली ई ई।'

'जी हा।' वह आकर सहज ही खडा हो गया है।

'अब तक लौटने को कह गये हैं साब ?'

'कुछ नही कहा, मिसेज बी, ३२६ वाली भी साथ थी।' काली थोडी देर खडा रहता है फिर चुपचाप लौट जाता है। मीनू ने एक दबी सी सास छोडी है। वह एक क्षण उसे देखती है सीने पर हाथ रखे आखें बद किये पडी है। धु धले अ धेरे मे पिकासो और हुसैन के चित्र टगे हैं। इधर ड्रेसिंग टेबल कार्नर पर नरगिस की एक छोटी कलात्मक मूर्ति खडी है निर्वस्त्र, वह उसे देर तक देखती रहती है। गोदरेज एलमिरा– शीशे की दीवारें जैसी खडी है उनमे पडता कमरे का प्रतिबिंब बडा इम्प्रेशनिस्ट–चित्र सा लग रहा है। वह अधलेटी हुयी है, क्या करे वह, उसके तकिय पर वह सुनहरा तुडा मुडा कागज पडा है। वह जोर से चिल्लाये क्या, अभी छडी लेकर दोनो का धुन डाले.... तब ?

'काली ई।'

जी हा,' वह आकर खडा हो गया है। क्या कहे वह 'देखो साहब आ रहे हैं क्या ?' काली जाता है — लौटकर आकर कहता है, 'नही जी।'

'अच्छा जाओ देखो– सोना नही जब तक वे लोग आये नही।'

'जी हा ।'

उसे लगता है पीठ मे से ठढ लग रही है और माथे में भवो के ऊपर कनपटी मे दद तपने लगा है। गले म धुआस उठ आई है, वह कम्बल मु ह तक ढाप लेती है– आखो मे गरम खारा पानी भर आया

भुवन की गाड़ी अंधेरे में खड़ी थी दूर, वर्ना .. शायद वह कुछ सा– चार दिन ठहरा– क्यों आया था पता नहीं .., फिर जी 'उठे और मीनू को तड़ातड़–तड़ातड़ चोट डाले तभी सरदर्द तेज़ है आंखों में अन्धेरा गाढ़ा हो आया, कम्बल हटाकर आंखें खोली था ही है। अन्धेरे में डूबा हुआ, सजा हुआ। मीनू, लगता है ...प सो गई है। वह उठी उठकर दो घड़ी खड़ी रही, बिचैन ...रात रहा है शायद रोशनी हो रही है। वह उठी उठकर दो ... रही। सोचने लगी क्या उठी थी, ड्रेसिंग टेबल में से नींद की ...ोलियां दोनों को देखती रही, फिर हाथ में रखकर निगल ...ग से ओढ़कर सो गई। अन्धेरा फिर गाढ़ा हो गया मेहरा साहब ...ते हैं, नेवर टेक एनी डिसीज़न, व्हेन यू आर इन इमोशन्स की ...ग्रेप

...र किस समय आया, कब गया उसे पता नहीं, सवेरे जब आंख ...मुन्नो चाय लिये खड़ी थी।

'दे मेज पर,' चाय रखकर वह चली गई।

...ग रूम में फूलदान में फूल बदल दिये हैं। मेज पर ताजा ...ाम पड़ा है उसके सर में अभी भी हलका हलका दर्द है, वह ...अग्नी–रस देती है ... पर ही किसी जलती हुयी बस का ...पोट उसे देखकर याद हो आया है हां वह रात भर जलते हुए रात भर इधर से उधर भागती रही है सब लोग तटस्थ भाव अपने मकान में लगे हैं वह आग उन्हें नहीं जला रही है सिर्फ जलन अनुभव कर रही है। आग बाहर लॉन तक सड़क ...लि हू करके चढ़ रही है। वहीं चाय मांगकर, फिर अन्दर लौटीं ये वैसे चुपचाप काम में व्यस्त बैठे हैं, कम्मो दरवाजे पर उम्मो को छुआ है तो चीख पड़ी है ये भी, ये भी जाने कब ...ाख इसीलिये नहीं जल रहे हैं राख हुए, ज्यों के त्यों रह गये हैं सिर्फ है। धुएं का एक गुब्बार दरवाजे से अन्दर आया है

और वह बेहोश होने लगी है तभी कम्मो ने जगा दिया है ।

उठी है, अन्दर आई है, मीनू के तकिये पर वह डायरी पड़ी है जिसमें उसने स्लिट्स कॉपी करने को दी थी । कागज लगा पेज मुड़ गया । पेंसिल से लिखा है, 'जिन्दगी डूबी–डूबी जाती है, कोई तिनका ही नजर आ जाये , आज की शाम तुमने यही मांगा था । 'भुवन, बारह मार्च, अठावन ।' ऊपर से मीनू ने लिख रखा है, बस-कॉपी, ब्रेड, बटर... बीस रुपये बहत्तर पैसे योगफल । दूसरे पेज पर भी कुछ लिखा है, भुवन की ही राइटिंग है ... 'अच्छा तेरी ही जिद रहेगी, अच्छा तुझे भूल जायेंगे हम, होली की आज की उदास शाम पर जब तुम अब बड़ी औपचारिक होती जा रही हो आज नहीं कई दिन से लग रहा है– भुवन ।' ऊपर से मीनू ने लिख रखा है, 'गाउन, फ्रिज', मम्मा के हिसाब में डेढ़ हजार बढ़ गये बाकी बैंक से या ...., पता नहीं क्या लिखा । वह चुप देर तक आंखें बन्द करके खड़ी रहती है फिर डायरी वहीं छोड़कर बाहर आई है पीछे की ओर । सुर्ख डेलिया ओस से भीगा भारी होकर सर झुकाये खड़ा है । ठंडी हवा ने चेहरा छुआ तो लगा जैसे लम्बी बीमारी के बाद बाहर आई हो मन और शरीर जैसे बड़ा हलका है ।

'कम्मो ऽ ऽ ।'

'जी ..., जी आई ... ।' वह आकर खड़ी हो गई है ।

'पिन्टू गया क्या ?'

'जी नहीं, अभी करूंगी तैयार, मीनू गई है अभी कुछ देर पहले ।'

'उसे ड्रेसिंग टेबल पर भेज दे आज मैं तैयार करूंगी उसे ।'

'आप !. . और आफिस ... ?'

'वहां न उसे भेज दे, वहीं, मैं आ रही हूं ।' पिंटू बाहर की ओर है आवाज सुनकर आ गया है कम्मो के साथ ।

'आप तैयार करेंगी आज !' पिट्टू उसका चेहरा दोनों हाथ से छू रहा है।

'हूँ।'

'रोज तैयार करेंगी आप ? रोज...? रोज....? बहुत दिन तक हमेशा तक ?'

'हां जाओ।' एक किस लिया है सड़क पर स्कूल-बस होर्न दे रही है, पिट्टू ने पलट कर वेव किया है। अन्दर आकर उसने डायरी खोली है फ्रिज तथा हिसाब के पृष्ठों को लाल पेंसिल से काट दिया है।